thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 22 मार्च 2015 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 22 मार्च 2015 से 28 मार्च 2015

चै.शु 02 ● वि० सं०–2072 ● वर्ष 79, अंक 149, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप-सभा एवं आर्य युवा समाज, हरियाणा ने आयोजित किया 'समर्पण महोत्सव'

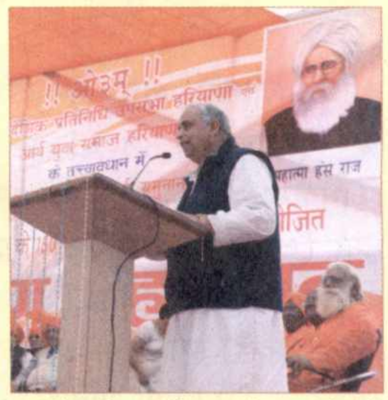

महात्मा हंसराज जी के 150वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में देश–भर में हुए आयोजनों की शृंखला में आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा एवं आर्य युवा समाज हरियाणा के संयुक्त तत्त्वाधान में डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्स, यमुना नगर के परिसर में 'समर्पण महोत्सव' का आयोजन किया गया। महोत्सव के संदर्भ में उपसभा और डी.ए.वी. कालेज फॉर गर्ल्ज के संयुक्त प्रयासों से यमुना नगर एवं इसके आसपास के ग्रामीण क्षेत्र में लगभग पन्द्रह दिन तक विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किये गये। मुख्य आयोजन 28 फरवरी, 2015 को कॉलेज के परिसर में सम्पन्न हुआ।

लगभग दस हजार आर्यजनों की उपस्थिति में आयोजन के मुख्य अतिथि, प्रधानाचार्य आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, श्री पूनम सूरी जी ने अपने संबोधन में जीवन को सुखी बनाने का मंत्र देते हुए जीवन में चार "स" उतारने को प्रेरित किया–संध्या, स्वाध्याय, सत्संग और सेवा। मान्य प्रधानजी ने अपने अनुभव के आधार पर बताया कि यदि जीवन में व्यक्ति उस परमात्मा का ध्यान करने, उससे बातें करने, उसके आगे अपनी मनोव्यवस्था कहकर एक संधि स्थापित करता है तो उसके जीवन में एक विशेष परिवर्तन आता है। स्वाध्याय की महिमा और इसके वास्तविक अर्थ के विभिन्न आयाम प्रस्तुत करते हुए उन्होंने स्वाध्याय की आवश्यकता पर बल दिया। सत्य के संग को सत्संग बताते हुए कहा कि इससे अंतः करण और आत्मा शुद्ध होती है और परलौकिक शक्ति का उदय होता है। सेवा को अहंकार–नाशिनी बताते हुए मान्य प्रधानजी ने कहा कि सेवा से एक अलौकिक सुख प्राप्त होता है।

इससे पहले 150 कुण्डीय यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें यमुना नगर एवं आसपास की अनेक आर्य समाजों से आए आर्यजन यजमान बने। डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्स की छात्राओं ने यज्ञ–प्रक्रिया में एक विशेष प्रशिक्षण प्राप्त किया था जिसके चलते उन्होंने इस विशाल यज्ञ में बहुत ही सार्थक योगदान दिया। दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. प्रमोद योगार्थी ने ब्रह्मा के रूप में इस यज्ञ का सफल संचालन किया और यज्ञ की अनेक बारीकियों का स्पष्टीकरण देते हुए लोगों के मन में यज्ञ के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण पैदा करने का सफल प्रयास किया। इस अवसर पर 31 जरूरतमंद महिलाओं को शॉल और एक–एक क्विंटल अन्न श्रीमती मणि सूरी जी के हाथों प्रदान किया गया जिसने इस पूरे आयोजन को सेवा–प्रकल्प से जोड़ दिया। स्वामी दयानन्द जी के जीवन पर आधारित एक नृत्य–नाटिका प्रस्तुत की गई जिसमें ऋषि की जीवन–गाथा को बहुत ही कलात्मक ढंग से 350 छात्राओं ने प्रस्तुत किया। इस प्रस्तुति का निर्देशन श्री अजय ठाकुर जी ने किया था।

इस आयोजन से एक दिन पूर्व 27 फरवरी, 2015 को कॉलेज सभागार में एक वेदकथा का आयोजन किया गया जिसका विषय था, 'जीवन का क्रिया योग।' अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त दार्शनिक डॉ. वागीश शर्मा जी ने लगभग एक घंटे तक इस विषय पर अपने विचार रखे। मानव को सृष्टि की सर्वश्रेष्ठ रचना बताते हुए उसे अन्य जीवों से भिन्न बताया और कहा कि परमात्मा ने मानव को अच्छा कर्म करने के लिए हाथ और मधुर बोलने के लिए वाणी प्रदान की है जो उसे अन्य जीवों से विशिष्ट स्थान प्रदान करती है। विद्वान वक्ता ने कहा कि ईश्वर प्रदत्त आठ सौभाग्य–शरीर, बुद्धि, मन की भावना, शिक्षा, माता–पिता, कर्मक्षेत्र, जीवन–साथी एवं संगठन–इन सभी का घनिष्ठ संबंध परम आनन्द का स्रोत है और मनुष्य श्रेष्ठ तब बनता है जब वह अपनी क्षमताओं का प्रयोग समर्पण और त्याग के लिए करता है, अपने लिये नहीं। श्री शर्मा ने स्वामी दयानन्द, स्वामी श्रद्धानंद और महात्मा हंसराज जैसे महापुरुषों का उदाहरण देकर अपनी बात को पुष्ट किया जिन्होंने अपना जीवन परहित को समर्पित कर दिया और उसमें आनन्द की प्राप्ति की।

डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्स की अध्यापिकाओं, छात्राओं और राष्ट्रीय सेवा योजना की स्वयं–सेविकाओं ने मिलकर 'वृक्षारोपण महोत्सव' का भी आयोजन किया जिसमें प्रस्तावित डी.ए.वी. यूनिवर्सिटी की भूमि पर साल, आमला, पापुलर एवं फलों के पौधों का रोपण किया गया। राष्ट्रीय सेवा योजना द्वारा कॉलेज में तथा गुरु तेगबहादुर साहेब गुरुद्वारा, बराड़ा में 'रक्तदान शिविर' का आयोजन करके 192 यूनिट रक्त एकत्रित किया। इस स्मरणीय आयोजन को सफल बनाने में श्री के.एल. खुराना, प्रधान, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा हरियाणा डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी, प्रधान, आर्य युवा समाज (हरियाणा) एवं श्री सत्यपाल आर्य, सचिव, डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी, दिल्ली एवं मंत्री, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, हरियाणा तथा डॉ. सुषमा आर्या, प्राचार्या, डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्स, यमुना नगर का उल्लेखनीय योगदान रहा। हरियाणा राज्य की आर्य समाजों, डी.ए.वी. विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के प्राचार्यों, अध्यापकों और कर्मचारियों ने इस आयोजन को सफल बनाने में तन, मन और धन से सक्रिय सहयोग किया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 22 मार्च, 2015 से 28 मार्च, 2015

बड़े-छोटे सबको नमः

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

नमो महद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्यः।
यजाम देवान् यदि शक्नवाम, मा ज्यायसः शंसमा वृक्षि देवाः।।

ऋग् 1.27.13

ऋषिः **आजीगर्तिः शुनः शेषः।** देवता **विश्वेदेवाः।** छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● **(महद् भ्यः नमः)** [ज्ञान और गुणों में] महानों को नमः **(अर्भकेभ्यः नमः)** छोटों को नमः, **(युवभ्यः नमः)** युवकों को नमः, **(आशिनेभ्यः नमः)** वयोवृद्धों को नमः। **(यदि शक्नवाम)** जहाँ तक [हम] समर्थ हों **(देवान्)** विद्वानों को **(यजाम)** सत्कृत करें। **(देवाः)** हे विद्वानों! **(ज्यायसः)** अपने से बड़े के **(शंसं)** स्तवन को [मैं] **(मा आवृक्षि)** न छोडूँ।

●मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसे अन्यों के प्रति अभिवादन आदि उचित शिष्टाचार का पालन करना होता है। मैं भी बड़े छोटे सबको अभिवादन करता हूँ; कृत्रिम और दिखावटी नहीं, किन्तु अन्तर्मन से 'नमः' करता हूँ। 'नमः' का मूल अर्थ है झुकना। झुकना सिर से भी होता है, मन से भी। राजा, राज्याधिकारी, माता, पिता, गुरु, अतिथि, साधु, संन्यासी, शिशु, कुमार, विद्यार्थी, युवक, वृद्ध, स्वामी, सेवक प्रत्येक से मिलने पर हृदय में जो आदर, श्रद्धा, प्रेम, आशीर्वाद आदि के भाव उत्पन्न होते हैं, वे सब 'नमः' के अन्दर समाविष्ट हैं। अतः अभिवादन के लिए वैदिक 'नमस्ते' शब्द अत्यन्त हृदय-ग्राही और उपयुक्त है। जब छोटे बड़े को 'नमस्ते' कहने में पारस्परिक सौहार्द और एक-दूसरे की उन्नति की कामना व्यक्त होती है। साथ ही 'नमः' में केवल शुभकामना ही नहीं, प्रत्युत बड़े-छोटे सबके प्रति कर्तव्य-पालन का भाव भी निहित है।

हे राष्ट्र के विद्यावृद्ध और गुणवृद्ध महान् नर-नारियों! हे उपदेशामृत-वर्षा से जनता को तृप्त करनेवाले वीतराग संन्यासियो! हे विद्वच्छिरोमणि तपोनिष्ठ वानप्रस्थ आचार्यो! हे देश के लिए प्राणों का उत्सर्ग करने को उद्यत महावीरों! हे जनता-जनार्दन की सेवा में तत्पर महापुरुषों! 'तुम्हें नमः'। हे निश्छल भावभंगियों और बाल-क्रीड़ाओं से मन को मुदित करने वाले अबोध शिशुओं! हे अल्पवयस्क कुमारो! हे गुरु के अधीन विद्याध्ययन में रत तपस्वी, व्रती ब्रह्मचारियों! तुम्हें 'नमः'। हे अपने संकल्प-बल से भूमि आकाश को झुका देनेवाले बली, साहसी, ओजस्वी, विजयी युवको! तुम्हें 'नमः'। हे परिपक्व, धीर, गम्भीर, अनुभवी, धन्य, वन्दनीय, वयोवृद्ध जनो! तुम्हें 'नमः'।

समस्त बालक, युवक, वृद्ध मेरे अर्चनीय देव हैं। जहाँ तक सम्भव होगा, मैं इन्हें स्नेह-सत्कार दूँगा, इनकी सेवा करूँगा। यह भी ध्यान रखूँगा। यह भी ध्यान रखूँगा कि जो मुझसे बड़े हैं, उनकी शंसना में, उनके उपकार के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन में मुझसे कोई त्रुटि न हो। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

एक ही रास्ता

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में बात हो रही थी कि 'धर्म' क्या है? धर्म का सरल और सीधा-सा अर्थ है-वह मार्ग जिससे लोक और परलोक दोनों सुधर जाएं। इसलिए गायत्री को धर्म देने वाली कहा गया, परंतु धर्म तो शरीर के साथ ही है। शरीर न हो तो धर्म नहीं हो सकता।

लोक-परलोक के सुधरने का प्रश्न भी उत्पन्न नहीं होता। वेद कहता है, 'हे गायत्री माँ तू लंबी आयु देने वाली है, धर्म देने वाली है, दीर्घायु देने वाली है, तू साथ देने वाली है और स्वस्थ शरीर भी देने वाली है। वर को देने वाली है। तू संतान भी देती है। तू धन और दौलत को देने वाली है। इनको बढ़ाने वाली है। इच्छाओं को पूरा करने वाली है। कीर्ति देने वाली है। इन सब के मिलने से मनुष्य को सुख अवश्य मिलता है, उसका कल्याण नहीं होता। कल्याण है इस बात में कि इन वस्तुओं को भोगने के पश्चात् उस ब्रह्मलोक को प्राप्त किया जाए जहाँ प्रभु के दर्शन होते हैं।

पुराणों में जिस शक्ति को ब्रह्मा, विष्णु, महेश के नाम से याद किया गया है, वह सविता है। सृष्टि की प्रत्येक वस्तु में इस महान् सविता शक्ति ने भूः भुवः स्वः की भावना दे दी है ताकि प्रत्येक वस्तु उपस्थित हो, बढ़ती जाए और अंत में आनन्द के अंदर पहुंचकर खो जाता है। एक पूरी स्कीम उस पर बना दी है। बीज से पौधा बनता है, पौधे से वृक्ष। वृक्ष पर फल और फूल खिलते हैं और तब यह धीरे-धीरे सोने लगता है। सब कुछ समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार यह सृष्टि जागती है, बनती है और समाप्त हो जाती है ताकि फिर से जागे, फिर बने।

अब आगे..

गायत्री की उपासना करने वाला भक्त जब गायत्री-मन्त्र को पढ़ता हुआ सविता शब्द पर पहुँचे तो उसे अनुभव करना चाहिए कि उसके आसपास कोई दुनिया नहीं है; केवल अनन्त, बेअन्त सोई हुई प्रकृति है, इसमें गति नहीं, रस नहीं, गन्ध नहीं, शब्द नहीं, बेअन्त सन्नाटा है हर ओर, तभी इस सोई हुई प्रकृति में गति आई है, गति से ज्योति उत्पन्न हुई है, अनन्त रोशनी है वहाँ, उसके अन्दर प्रचण्ड ताण्डव करती हुई आग जल उठी है। धीरे-धीरे यह आग बढ़ी है, एक विशाल जलता हुआ गोला बन गई है, फिर यह गोला फटा है, इससे अनन्त सूर्य निकलकर उछले हैं, अनन्त चाँद, अनन्त तारे; उन्हीं में से एक जलता हुआ तारा उसके सामने आया है। लगातार घूमे जाता है वह, घूमे जाता है और जले जाता है- कई-कई मील तक ज्वालाएँ उठ रही हैं। इन ज्वालाओं के धुएँ से चहुँ ओर बादल-से बन जाते हैं, गर्मी से भाप बनती है, भाप से घटाएँ जाग उठती हैं, बेताब और बेचैन बिजलियाँ उनमें चमकती हैं, बार-बार वे गर्जती हैं, कान-पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं देती। तब वर्षा होने लगती है, धुआँधार वर्षा, गर्जते हुए बादल, तड़पती हुई बिजलियाँ, गिरता हुआ पानी, शताब्दियों तक यह वर्षा होती रहती है, तब आग का वह गोला ठंडा होने लगता है। उसके ऊपर नदियाँ भागने लगी हैं, सागर बनने लगे हैं, पहाड़ उभरने लगे हैं, उन पर हरियावल जागने लगी है, वृक्ष, पौधे, फल और फूल झूमने लगे हैं, और तब इस लहलहाती पृथिवी पर नौजवान लड़के जाग उठे हैं, नौजवान लड़कियाँ। हर ओर वसन्त के फूल खिल उठें हैं। वसन्त के गीत गूँज उठते हैं। इसी बात को वेद ने कहा है-

ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ततो रात्र्यजायत। ततः समुद्रो अर्णवः।। समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरोऽजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी।। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।।

इस मन्त्र को हम अघमर्षण मन्त्र कहते हैं। पाप को धोनेवाला मन्त्र कहते हैं, परन्तु इससे पाप धुलता कैसे है? उस ज्ञान से, जिसकी मैंने अभी चर्चा की। मनुष्य जब सृष्टि के रचने की बात सोचता है, जब वह देखता है कि जिस भूमि पर वह रहता है, वह कभी इस प्रकार बनी थी, वह इस विशाल सूर्यमण्डल में धूल के एक कण के समान है; और यह सूर्यमण्डल स्वयं इस विशाल सृष्टि में धूल के एक कण के समान है, अरबों-खरबों सूर्यमण्डल इस विश्व में हैं और इन सबको बनाने वाला वह महान् प्रभु है, जो वह सोचता है कि मैं क्या हूँ, मेरा अभिमान क्या है? जिन वस्तुओं के लिए मैं पागल हुआ फिर रहा हूँ वे क्या हैं? तब प्यार से, श्रद्धा से, वह अपने सिर को झुका देता है, उस आनन्द की ओर बढ़ता है, जिसका कभी अन्त नहीं, जो अजर और अमर है। इस प्रकार उसके पाप कटते हैं।

एक था राजा। एक बार अपने मन्त्रियों को कहा उसने, "दो 'अबके'

लाओ, "दो 'तबके' लाओ और दो ऐसे जो न अबके हों न तबके।" बहुत–से मन्त्री आश्चर्यचकित हुए कि यह माँग क्या है? यह 'अबके' और 'तबके' क्या हुआ? कौन उनकी खोज करे? कहाँ से लायें राजा के पास? परन्तु एक मन्त्री था समझदार; उसने कहा, "महाराज! मैं लाता हूँ।" और वह दो राजाओं को ले आया, दो साधुओं को, दो साधारण व्यक्तियों को। उन्हें सामने करके उसने कहा, "महाराज! ये राजा लोग अबके हैं। इन्होंने पिछले जन्म में पुण्य किया था और अब उस पुण्य को भोग रहे हैं। ये दो तपस्वी साधु हैं। ये अबके नहीं, तबके हैं। आज ये पुण्य के मार्ग पर चलते हुए तप करते हैं और आगे जाकर ये इसका फल भोगेंगे। ये दो साधारण व्यक्ति हैं, इन्होंने न पिछले जन्म में कोई बड़ा पुण्य किया, न अब कर रहे हैं, ये अबके हैं न तबके हैं।"

साधारणतया हम सब लोग न 'अबके' होते हैं न 'तबके'। ऐसा बनने का लाभ क्या है? इसलिए तो यह जन्म नहीं मिला कि अबके रहो न तबके। सविता का ध्यान करते समय इन बातों को सोचो। सविता से प्रार्थना करो, "ऐ महाशक्ति! मेरी बुद्धि को प्रेरणा कर! तू इस विशाल विश्व को बनाने वाली है, इस महाप्रकृति को जगाने वाली है, मेरी बुद्धि को जागृत कर दे!"

परन्तु देखो, जब ऐसी प्रार्थना करोगे तो भगवान पूछेगा, "मुझे तू प्रेरणा करने के लिए कहता है, मैं करूँगा अवश्य, परन्तु क्या तूने भी कभी किसी को प्रेरणा की है? तूने भी किसी का अज्ञान दूर किया है? इतना अज्ञान है संसार में, उसे यदि तूने दूर नहीं किया, उसके एक भाग को भी दूर करने का यत्न नहीं किया तो फिर मुझे किस प्रकार कहता है कि मैं तुझे प्रेरणा करूँ?"

हमारे पूर्वज जब तक सविता–शक्ति की इस ललकार को सुनते रहे, जब तक वे स्वयं सविता–शक्ति से कार्य लेते रहे, तब तक इस पृथिवी पर आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा; दुनिया–भर में एक शासन रहा; एक राष्ट्र रहा। आज भी चीन, जापान, अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका और प्रत्येक देश में इस राष्ट्र के चिह्न मिलते हैं। परन्तु जब से आर्य लोगों ने सविता–शक्ति से कार्य लेना बन्द कर दिया, तब से यह राष्ट्र सिकुड़ना आरम्भ हुआ, सिकुड़ते–सिकुड़ते एक छोटा–सा देश रहा गया।

सीधी–सी बात है जब मैं ईश्वर को सविता कहता हूँ, तो मेरा भी कर्तव्य है कि दूसरों को प्रेरणा करूँ। उन्हें सत्य मार्ग की ओर ले जाने का यत्न करूँ। सत्यमार्ग क्या है, यह बताने में कभी कसर न करूँ। भगवान विष्णु का चित्र तो आपने देखा है। वास्तव में यह चित्र नहीं। भगवान् का चित्र नहीं बन सकता, केवल एक कार्टून है लोगों को समझाने के लिए। चार भुजाएँ हैं विष्णु की। इसकी सबसे पहली भुजा में शंख पकड़ा हुआ है। यह शंख क्या है? प्रचार–शक्ति। आजकल के समय में रेडियो, समाचारपत्र, टेलीविजन, किताबें, पोस्टर। विष्णु का अर्थ है सर्वव्यापक। जो जाति सर्वव्यापक होना चाहती है, उसके लिए आवश्यक है कि एक दृढ़ शंख उसके पास हो। अपने सत्य विचारों का प्रचार करने की शक्ति उसके पास हो। घरों से बाहर निकलो! अपनी संस्कृति के शंख को जोर से बजाओ! प्रचार करो उसका! आप कहेंगे, "आनन्द स्वामी! तू तो हो गया संन्यासी, निकल गया घर से बाहर। हम कैसे निकलें?" अरे भाई! घर से बाहर नहीं निकल सकते, तो वेद–प्रचार के लिए धन तो दे सकते हो। तुम्हारे लिए धन देना ही सविता–शक्ति से कार्य लेना है।

परन्तु ये सब बातें मैं आपको क्यों कहता हूँ? केवल यह बताने के लिए कि गायत्री मन्त्र केवल जाप करने की वस्तु नहीं, आचरण करने की वस्तु है। कई लोग कहते हैं, "गायत्री का जाप कैसे करें? बहुत कठिन है।" कई और व्यक्ति कहते हैं, "नहीं, कठिन नहीं, सरल है; हमने सवा लाख गायत्री का जाप किया।" किया होगा अवश्य, परन्तु किस प्रकार किया आपने जाप? मन्त्र को बार–बार पढ़ने से तो कुछ होता नहीं। वास्तविक बात है आचरण। गायत्री का जाप करो, गायत्री पर आचरण भी करो, तभी यह जाप सफल होगा। सोचो कि संसार को तुमसे क्या लाभ है? सोचो कि दूसरों का भला कैसे होगा? प्रार्थना करो कि देश का कल्याण हो, संसार का कल्याण हो। यह बात विशेषकर इन माताओं को कहता हूँ। देवियों की बात ईश्वर जल्दी सुनता है। देवियों में श्रद्धा होती है अधिक। योग की जो क्रियाएँ पुरुष पन्द्रह मास में भी नहीं सीख पाते, देवियाँ उन्हें पाँच ही मास में सीख लेती हैं। पुरुष तो हर समय सन्देह ही करते रहते हैं; उस बुद्धि को दौड़ाते रहते हैं जो वास्तव में है नहीं। इसलिए मैं देवियों से कहता हूँ, प्रार्थना करो कि इस देश का कल्याण हो, संसार का कल्याण हो।

शेष बातें कल बताऊँगा, परन्तु कल के लिए एक विशेष बात भी कहना चाहता हूँ। कल कथा का अन्तिम दिन है, अन्तिम दिन दान दिया जाता है। मैं हूँ संन्यासी, भीख माँगना मेरा अधिकार है। मैं भी कुछ माँगूँगा अवश्य। आप अपने साथ लेकर आइये। आप कहेंगे, "आनन्द स्वामी! तू भी लोभी हो गया है।" कुछ भी कहिये, परन्तु लूँगा अवश्य। माँगूँगा अवश्य। धन नहीं माँगूँगा, दौलत नहीं माँगूँगा, मकान, कोठियाँ, बँगले नहीं माँगूँगा, मोटरें और गाड़ियाँ नहीं माँगूँगा, अनाज के भण्डार नहीं माँगूँगा, फिर भी माँगूँगा अवश्य। वह वस्तु माँगूँगा जो मनुष्य के काम नहीं आनी चाहिए, जो आपके काम नहीं आती, फिर भी आपके पास है अवश्य। कल सावधान होकर आइये, इस वस्तु की गठड़ियाँ बाँधकर ले आइये। मैं फ़कीर हूँ, माँगूँगा अवश्य।

ओ३म् तत् सत्!

शेष अगले अंक में....

आत्मा कैसे देखता है?

● कृपाल सिंह वर्मा

शतपथ ब्राह्मण यजुर्वेद का सबसे प्राचीन भाष्य है। आत्मा किस प्रकार देखता है? इसका वर्णन शतपथ ब्राह्मण के काण्ड 12, अध्याय 8, ब्राह्मण 2, कण्डिका 25 में किया गया है–

"चक्षुर्वाऽआश्विनो ग्रह। प्राणः सास्वतो वागैन्द्र आश्विनात्सारस्वतेऽवनयति चक्षुरेवास्य तत्प्राणेः संधाति सारस्वतादैन्द्रः प्राणेनवास्य तद्व ाचा संधात्यथो प्राणानेवास्य तद्वाची प्रतिष्ठापयति तस्मात्सर्वे प्राण वाचि प्रतिष्ठिता।। 25।।

अर्थः– "आश्विन ग्रह चक्षु है, सारस्वत ग्रह प्राण है। इन्द्र ग्रह वाक् है। आश्विन ग्रह से सारस्वत ग्रह में उड़ेलता है। इससे प्राणों में चक्षु का मेल कराता है। सारस्वत ग्रह से ऐन्द्र ग्रह में, इस प्रकार प्राण और वाणी का मेल कराता है। और उसके साथ प्राण के द्वारा उसको वाक् में स्थापित करता है। इसलिए सब प्राण वाणी में प्रतिष्ठित है।। 25।। (गोविन्दरामहासानन्द संस्करण पेज 197, तृतीय भागः)

आत्मा की आकार अत्यन्त सूक्ष्म होता है।

"बालाग्र शतभागस्य शत्धा कल्पित्स्य च (श्वेताश्वतर उपनिषद्)

बाल के अग्रभाग के सौवें भाग का भी सौवा भाग अर्थात् 100×100=10,000वां भाग अर्थात् बाल के अग्रभाग का दस हजारवां भाग के बराबर आत्मा का आकार होता है। इतने सूक्ष्म आत्मा में 5 ज्ञानेन्द्रियाँ, 5 प्राण, मन तथा बुद्धि ये बारह शक्तियां विद्यमान होती हैं। यहां हमारा सम्बन्ध केवल चक्षु इन्द्रिय से है जिसका कार्य देखना है। प्रश्न यह है कि इतना सूक्ष्म आत्मा इतने बड़े बाह्य दृश्य किस प्रकार देख लेता है? प्रस्तुत कण्डिका में यही दर्शाया गया है।

सामान्य व्यक्ति यही मानता है कि किसी वस्तु को देखने के लिए केवल प्रकाश की आवश्यकता होती है। लेकिन ऐसा नहीं है। जिस प्रकार पूर्ण अन्धकार की स्थिति में वस्तु दिखायी नहीं देती उसी प्रकार पूर्ण प्रकाश की स्थिति में भी वस्तु दिखायी नहीं देती। जब आँखों के ऊपर टार्च का प्रकाश कर देते हैं तो क्या कोई वस्तु दिखाई देती है? हमारी आँखें किस दिव्य शक्ति की उपस्थिति में देखती हैं। वैदिक विज्ञान की भाषा में पूछें तो चक्षु का देवता कौन है? उत्तर है– अश्विनौ अर्थात् अन्धकार एवं प्रकाश का जोड़ा। अन्धकार एवं प्रकाश के मेल से ही किसी वस्तु का चित्र बनता है जिसे हमारी आँखें ग्रहण करती हैं। वस्तु के किसी बिन्दु पर प्रकाश अधिक होता है तो किसी पर अन्धकार अधिक होता है। प्रकाश एवं अन्धकार के मेल से ही चित्र उभरता है।

अब प्रश्न यह है कि इन विशाल चित्रों को इतना सूक्ष्म आत्मा किस प्रकार ग्रहण करता है?

(i) चक्षुर्वाऽअश्विनो ग्रहः।

चक्षु, अश्विनौ ग्रह की सहायता से किसी वस्तु का चित्र ग्रहण करता है।

(ii) प्राणः सारस्वतो

प्राण सारस्वत ग्रह की सहायता से संकेत भेजते हैं।

(iii) वागैन्द्र

वाणी इन्द्र ग्रह की सहायता से प्रकट होती है। इन्द्र का अर्थ है Electricity.

(iv) आश्विनात्सारस्वतेऽवनयति

आश्विन ग्रह अर्थात् प्रकाश संकेत (Photo Signals) सारस्वत ग्रह अर्थात् प्राण संकेतों में बदल जाते हैं। अर्थात् आत्मा प्रकाश संकेतों को प्राण संकेतों के रूप में प्राप्त करता है।

(v) चक्षुरेवास्य तत्प्राणो संदधाति।

चक्षु सारस्वत ग्रह को प्राणों में स्थित कर देता है।

(vi) सारस्वतादैन्द्रेप्राणेनवास्यतद्वाचासंदधाति, अथः प्राणेनास्य तद्वाचि प्रतिष्ठापयाति।

सारस्वत ग्रह से ऐन्द्र ग्रह में, इस प्रकार प्राण और वाणी का मेल कराता है। और उसको प्राण के द्वारा वाक् में स्थापित करता है।

(viii) तस्मात्सर्वे प्राणा वाचि प्रतिष्ठिता

इसलिए सब प्राण वाणी में प्रतिष्ठित हैं।

अश्विनौ ग्रह की सहायता से जो चित्र चक्षु को प्राप्त होता है वह प्रकाशात्मक होता है, उस चित्र को आत्मा प्राणात्मक संकेतों के रूप में प्राप्त करता है। आत्मा प्राणों की सहायता से (व्यान नामक प्राण के द्वारा) सारे शरीर पर नियन्त्रण रखता है। व्यान का संचार हिता नामक एक सौ एक नाड़ियों में होता है। प्रकाश तरंगें, प्राण तरंगों में बदल जाती हैं। प्राण तरंगों की सहायता से आत्मा Scanning विधि के द्वारा चित्र प्राप्त करता है जैसा कि T.V. में चित्र बिन्दुवार अंकित होता है। **प्रकाश एवं अन्धकार के योग से आँख के पर्दे पर बना चित्र प्राण तरंगों के द्वारा आत्मा के मानस पटल पर बिन्दुवार अंकित होता है।**

253 शिवलोक
कंकरखेड़ा, मेरठ

thearyasamaj.org

भगवद्गीता का एक सदाचार मूलक श्लोक

● डॉ. भवानीलाल भारतीय

हमारे शास्त्रों ने सत्यासत्य, धर्माधर्म, कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य, न्याय–अन्याय के निर्णय के लिए वेद, स्मृति, सदाचार (श्रेष्ठ पुरुषों का आचरण) तथा स्वयं की आत्मा की स्वीकृति को प्रमाण माना है। यहाँ सदाचार को तीसरा स्थान मिला है। गीता ने सदाचार को अन्यों के लिए भी अनुकरणीय मानकर सभी को ऐसा ही आदर्श उपस्थित करने के लिए कहा है, जिसे अन्य भी अपनायें। प्रासंगिक श्लोक है–

यद् यद् आचरति श्रेष्ठः तत् देवोतरा जनाः।
स यत् प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्त्तते।।

श्रेष्ठ पुरुष जैसा आचरण करते हैं, सामान्य लोग भी उसी का अनुकरण करते हैं। इसीलिए कहा है– रामवत् वर्तितव्यम् म तु रावणवत्। हमें राम जैसे मर्यादा पुरुषों के आचरण को अपनाकर श्रेष्ठ आर्य का आदर्श उपस्थित करना चाहिए न कि रावण की भांति दुराचारी, अत्याचारी के समस्त राक्षसों के काम। सम्भवतः सदाचार की शिक्षा देने वाला यह गीता का महत्त्वपूर्ण श्लोक है।

3/5 शंकर कालोनी, श्रीगंगानगर

गोपीचन्द कॉलेज में ऋषिबोधोत्सव मनाया गया

गोपीचन्द आर्य महिला कॉलेज अबोहर (पंजाब) में भारत में नवजागरण के सूत्रधार महर्षि दयानन्द सरस्वती के बोधोत्सव के उपलक्ष्य में हर्षोल्लासपूर्वक हवन–यज्ञ का आयोजन किया गया। प्राचार्या डॉ. नीलम अरुण मित्तु हवन में मुख्यातिथि तथा प्राध्यापकगण यजमान के रूप में उपस्थित थे। पुरोहित श्री अशोक शास्त्री व संस्कृत प्राध्यापिका ने वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ प्रातः

कालीन आहुतियों के द्वारा हवन सम्पन्न करवाया। छात्राओं ने स्वामी दयानन्द द्वारा मानव जाति पर किए गए उपकारों व उनके जीवन चरित्र को कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत किया। यज्ञ समाप्ति पर पंजाब यूनिवर्सिटी में शीर्ष स्थान पर रहने वाली छात्राओं आर्या विद्या सभा द्वारा आयोजित धर्म शिक्षा परीक्षा में अखिल भारतीय स्तर पर तृतीय स्थान पाने वाली छात्राओं को प्राचार्या जी ने पुरस्कार व प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया। इस पुनीत अवसर को उपयुक्त समझते हुए साहित्यकर्मी डॉ. नीलम अरुण मित्तु ने स्वानुभूत रचनाओं का काव्य संकलन 'यूँ ही लिखते–लिखते' का विमोचन बिना प्रचार प्रसार के अत्यन्त सादगी से कॉलेज की मेधावी छात्राओं द्वारा करवाया। कार्यक्रम के अंत में सभी ने समवेत स्वरों से जयघोष के साथ ऋषि दयानन्द को शत्–शत् नमन किया।

Thus Spoke Swami Dayanand

❖ That by which the true nature of things is known is called Knowledge, whilst that by which the true nature of things is not revealed and, instead, a false conception of things is formed, is called Ignorance.

❖ Virtuous acts, the worship of one true God and correct knowledge lead to Emancipation, whilst an immoral life, the worship of idols (or other things or persons in place of God), and false knowledge are the cause of the Bondage of the soul.

❖ Performance of righteous acts, as truthfulness in speech, and the renunciation of sinful acts, as untruthfulness, alone are the means of Salvation.

❖ One who is sunk in sin and ignorance is in Bondage.

❖ It is the soul that thinks, knows, remembers and feels its individuality through the organs of thought, discernment, memory and individuality. It is, therefore, the soul that enjoys or suffers.

❖ It is the soul that is limited by time and space, finite in nature, knowledge and power, but not the Omniscient, Omnipresent Brahma.

❖ God is everywhere and permeates everything. An emancipated soul well-endowed with perfect knowledge and bliss is free to go about in Him unobstructed.

❖ Let him, who wants to escape from pain and enjoy happiness, abandon sin and practise righteousness; because sin is the cause of pain and suffering, whilst righteousness begets happiness.

❖ Let him (i.e., the seeker after Salvation) always renounce qualities and habits that are the result of the darkness of mind (Tamoguna), such as anger, uncleanliness—both physical and mental—indolence, and infatuation.

❖ Let him (i.e., the seeker after Salvation) also hold himself aloof from Rajoguna, i.e., passions, such as jealousy, hatred, lust, conceit and restlessness of spirit, and instead, acquire Satoguna, i.e., good qualities, such as tranquality of mind, gentle disposition, purity, knowledge and ideas.

Compiled by — Satyapriya,
09868426592

(Sourced from the English translation of 'Satyarth Prakash' by Dr. Chiranjiv Bhardwaj and published as 'The Light of Truth' from D.A.V. Publication Division)

thearyasamaj.org

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका– प्राणी–मात्र को कर्म के अनुसार दुःख मिलना लिखा ही है तो फिर उनको दुःख भोगने देना चाहिए। तो शास्त्रों में क्यों लिखा है कि प्राणी–मात्र की सेवा, सहायता करनी चाहिए?

समाधान– इसका उत्तर है:–

● कल्पना करो कि **अपने कर्मानुसार हम भी कहीं दुःख में फँस गए, तब हम क्या चाहेंगे?** तब हम यही चाहेंगे कि दूसरा व्यक्ति हमारी सहायता कर दे, हम भले ही दुःख में फँस गए। जब हम चाहेंगे कि दूसरा व्यक्ति हमारी सहायता करे, तो हमको भी दूसरे की सहायता करनी चाहिए। हम भी अपने कर्मानुसार दुःख में फँसेंगे, वो भी अपने कर्मानुसार दुःख में फँसा है।

● **जैसा व्यवहार हम दूसरों से अपने लिए चाहते हैं, वैसा ही हमें दूसरों के साथ करना चाहिए। यह धर्म की बात है, मनुष्यता की बात है।** इसलिए हमें दूसरों की सहायता करनी चाहिए।

● ईश्वर ने उसके कर्मानुसार उसको दुःख दिया। किसी को विकलांग बना दिया, किसी को रोगी बना दिया। कर्म के अनुसार दुःख देना, यह ईश्वर का काम है। ईश्वर ने अपना काम किया।

जिस ईश्वर ने व्यक्ति को कर्मानुसार दुःख दिया, उसी ईश्वर ने हमको यह सुझाव दिया कि, भई इस रोगी की, इस मुसीबत के मारे की सहायता करना। ईश्वर के आदेश का पालन करना हमारा धर्म है। इसलिये कोई दुःख में फँस जाए, आपत्ति में फँस जाए, तो उसकी सेवा–सहायता जरूर करनी चाहिए।

● ईश्वर के दंड **विधान में बाधा** उत्पन्न करना **तब होता, जब ईश्वर** मना कर देता **कि रोगी की सहायता मत करो। और फिर भी हम ऐसा करते।** यह उसके काम में दखलंदाजी होती। पर जब ईश्वर स्वयं ही कह रहा है कि, "तुम इसकी सहायता करो।" इसलिए उसके काम में हमने गड़बड़ नहीं की, बल्कि उसके आदेश का पालन किया। अपराधी को दंड देना ईश्वर का काम है और दंड मिलने के बाद उसकी सहायता करना हमारा काम है। क्योंकि यह काम हमको ईश्वर ने बताया है। ऐसा करने में कोई आपत्ति नहीं है।

● और एक बात जो खास समझने की है कि – जो भी दुःख हमें प्राप्त होते हैं, वे सब हमारे कर्मों का फल नहीं हैं। **कुछ दुःख हमारे कर्मों का फल हैं, कुछ अन्याय से भी हमको भोगने पड़ते हैं।** दूसरे व्यक्तियों या प्राणियों के द्वारा अन्याय हो सकता है। प्राकृतिक दुर्घटनाओं से भी हमको दुःख भोगने पड़ते हैं। अतः सहायता करना कोई अपराध नहीं है।

शंका– आपके अनुसार हमें परमात्मा का साक्षात्कार और मोक्ष की प्राप्ति करनी चाहिए, परंतु शहीद भगत सिंह और अन्य स्वतंत्रता सेनानी अगर वैराग्य वाले रास्ते पर चलते, तो क्या हमें स्वतंत्रता मिलती?

समाधान– ये पूछना चाहते हैं कि मैं उपासना के मार्ग पर चलकर परमपिता को प्राप्त करूँ या फिर भारत वर्ष के इतिहास तथा ज्ञान–गौरव की रक्षा के लिए राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार और कुरीतियों को समाप्त करने के लिये क्रांति का मार्ग अपनाऊँ? उत्तर है:–

● जिस समय हमारा देश परतंत्र था, पराधीन था, और महाराणा प्रताप, वीर शिवाजी, चंद्रशेखर आजाद, सुभाष चन्द्र बोस, ये सब लोग देश रक्षा के लिये चले। इन्होंने त्याग किया, बलिदान किया। उस समय देश में ब्राह्मण, संन्यासी, उपदेशक, वेद को पढ़ाने वाले भी थे और धोबी, नाई और मिठाई बनाने वाले हलवाई भी थे।

क्या उस परतन्त्रता के समय में धोबियों, नाइयों, हलवाइयों ने अपने–अपने कार्य छोड़ दिये थे? क्या वे सब स्वतंत्रता की लड़ाई में कूद पड़े थे? नहीं न! तो जब धोबी, नाई हलवाई आदि आपना काम नहीं छोड़ते, तो ब्राह्मण अपना काम क्यों छोड़ें? यदि ब्राह्मण अपना काम छोड़कर क्षत्रिय का काम शुरू कर देता है, तो वह बुद्धिमत्ता नहीं है। यह ब्राह्मण की उन्नति नहीं, पतन है।

● शहीद भगत सिंह आदि लोग यदि वैराग्य के रास्ते पर चलते, तो हमें स्वतंत्रता नहीं मिलती। ये बात सत्य है। परन्तु यदि महर्षि दयानंद जैसे ब्राह्मण संन्यासी न होते, तब भी स्वतंत्रता नहीं मिलती। इसलिए ब्राह्मण और क्षत्रिय आदि सभी लोग चाहिए।

● भगत सिंह आदि ब्राह्मण व संन्यासी क्यों नहीं बन पाए? उनके पूर्व जन्मों के इतने वैराग्य, विद्या आदि के संस्कार नहीं थे। क्षत्रियत्व के संस्कार तो थे। इसलिए क्षत्रिय बनकर उन्होंने देश की रक्षा की। अपनी योग्यता और संस्कारों के अनुसार उन्होंने बहुत अच्छा काम किया।

● यह मानव जीवन का अंतिम लक्ष्य नहीं है। अंतिम लक्ष्य तो मोक्ष (सब दुःखों से छूटना एवं आनंद की प्राप्ति) है। इसलिए वही प्राप्त करना चाहिए। क्षत्रिय बनकर देश की रक्षा करना, इसमें बाधक नहीं है, बल्कि एक मध्यगत स्तर है।

● **वास्तव में समाज को सबकी जरूरत है। ब्राह्मण भी चाहिए, क्षत्रिय भी चाहिए, वैश्य भी चाहिए।** आपको अपनी क्षमता (कैपेसिटी) और अपनी योग्यता देखनी है कि, आप इनमें से क्या बन सकते हैं?

(1)पहली प्राथमिकता है – ब्राह्मण बनने की। आज सच्चा ब्राह्मण नहीं मिलता। आज जितने ब्राह्मण हैं, एकाध को छोड़ दो, बाकी लगभग सब के सब व्यापारी बन गये हैं। सब दुकान खोलकर पैसे कमाने में लगे हैं। **आज अच्छे ब्राह्मण नहीं मिलते, इसलिए यह देश और दुनिया बिगड़ गयी।**

● **देश को बचाने के लिए जितनी राजाओं, क्षत्रियों, वीरों की आवश्यकता है, उससे कहीं ज्यादा आवश्यकता सच्चे ब्राह्मणों की है।** जो सच्चे देशभक्त, ईमानदार, सच्चे ब्राह्मण और ईश्वर भक्त हों, पहला नंबर उनका है। वो देश को बचा सकते हैं।

● **आप अपनी क्षमता को देखें। अगर आप ब्राह्मण बन सकते हैं तो प्रथम वरीयता (फर्स्ट प्रिफरेन्स) है – ब्राह्मण बनिए।**

(2) अगर इतनी क्षमता, इतनी सामर्थ्य नहीं है, बुद्धि नहीं चलती, इतनी मेहनत नहीं कर सकते, विद्या नहीं पढ़ सकते, तो द्वितीय विकल्प है– अच्छे क्षत्रिय बनिए। फिर वीरों का मार्ग अपनाओ। सेनाओं में जाओ और देश की रक्षा करो।

(3)यदि उतनी भी क्षमता नहीं है तो फिर वैश्य बनिए। पैसे कमाइए और दान दीजिए। अब लोग पैसे तो कमाते हैं, मगर दान नहीं देते। फिर भला देश की रक्षा कैसे होगी?

● मैं जब कहता हूँ कि, 'अपरिग्रह' का पालन करो, बहुत पैसे मत कमाओ।" तो फिर लोग कहते हैं – "जी देखो, वेद में लिखा है कि 'शतहस्त समाहर' यानी खूब कमाओ, सौ हाथों से कमाओ।" मैं कहता हूँ – "हाँ, बिल्कुल लिखा है, पर इसके आगे क्या लिखा है, वो भी तो पढ़ो।" वेद में 'शतहस्त समाहर' के आगे लिखा है कि– "सहस्रहस्त संकिर" यानी **सौ हाथों से कमाओ और हजार हाथों में बाँटो।** लोग आधा पढ़ लेते हैं कि, चारों ओर से कमाओ और अगला पढ़ते नहीं। फिर ऐसे थोड़े ही देश चलता है। ऐसे देश में रक्षा नहीं होती।

● मोक्ष केवल ब्राह्मण को और संन्यासी को मिलेगा। अगर मोक्ष में जाना है, तो ब्राह्मण बनना होगा। यही एक रास्ता है। "नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय" अर्थात् मोक्ष प्राप्ति के लिए दूसरा कोई रास्ता नहीं है। इसलिए अपनी–अपनी योग्यता बढ़ाओ, तपस्या करो, विद्या पढ़ो, ब्राह्मण बनो और विद्या का प्रचार–प्रसार करो। फिर वैराग्य बढ़ाओ, फिर संन्यासी बनो, तब कहीं मोक्ष का रास्ता खुलेगा। ऐसे नहीं खुलेगा, यह ध्यान रखना।

● पहले बता रहा हूँ घर छोड़े बिना किसी का मोक्ष होने वाला नहीं। **अनेक पंडित लोग जनता को खुश करने के लिए बोलते हैं कि– "साहब, घर में बैठे–बैठे भी गृहस्थ आश्रम से सीधा मोक्ष हो सकता है।" वे बिल्कुल झूठ बोलते हैं।** ऐसा कहीं नहीं लिखा।

"मोक्ष केवल अति उग्र तपश्चरण करने वाले संन्यासियों का ही होता है, अन्यों का नहीं।" आपको मोक्ष में जाना है, तो संन्यासी बनना पड़ेगा। घर में बैठे–बैठे मोक्ष हो जाता, तो मैं ही घर क्यों छोड़ता? और भूतकाल में लाखों संन्यासी घर क्यों छोड़ते?

–दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ (गुजरात)

ईश्वर के दंड विधान में बाधा उत्पन्न करना तब होता, जब ईश्वर मना कर देता कि रोगी की सहायता मत करो। और फिर भी हम ऐसा करते। यह उसके काम में दखलंदाजी होती। पर जब ईश्वर स्वयं ही कह रहा है कि, "तुम इसकी सहायता करो।" इसलिए उसके काम में हमने गड़बड़ नहीं की, बल्कि उसके आदेश का पालन किया। अपराधी को दंड देना ईश्वर का काम है और दंड मिलने के बाद उसकी सहायता करना हमारा काम है। क्योंकि यह काम हमको ईश्वर ने बताया है। ऐसा करने में कोई आपत्ति नहीं है।

thearyasamaj.org

'सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग ही मनुष्य का धर्म है'

● मनमोहन कुमार आर्य।

किसी विषय पर यदि दो बातें है। इनमें हो सकता है कि एक सत्य हो और दूसरी असत्य या दोनों ही असत्य भी हो सकती हैं। ऐसी स्थिति में सत्य इन दोनों बातों से भिन्न हो सकता है। सत्य विचारों, सिद्धान्तों और मान्यताओं से जीवन में लाभ होता है और असत्य से लाभ तो कुछ नहीं होता अपितु हानि होती है। सत्य से लाभ क्यों होता है और असत्य से हानि क्यों होती है? यह विचारणीय प्रश्न है। इसका एक उदाहरण लेते हैं। मान लीजिए कि आपको देहरादून से हरिद्वार जाना है तो आपको हरिद्वार रोड पर चलना होगा तभी हरिद्वार पहुचेंगे। **यदि आप हरिद्वार रोड को अज्ञान व अन्धविश्वास के कारण छोड़कर सहारनपुर मार्ग, चकरौता मार्ग या मसूरी मार्ग पर चलेंगे तो हरिद्वार नहीं आयेगा और आप कहीं से कहीं पहुंच जायेंगे।** इसी प्रकार से यदि आपको स्वस्थ रहना है तो आपको ऋतु के अनुसार, अल्प मात्रा में और जो आपके लिए हितकारी हो, ऐसे शाकाहारी व पौष्टिक भोजन को करना होगा। इसके साथ आपको समय पर उठना, ईश्वर का ध्यान व उपासना, व्यायाम, प्राणायाम, स्नान, सत्य बोलना आदि का व्यवहार करना होगा। यदि कोई व्यक्ति इन बातों की उपेक्षा करे तो वह स्वस्थ नहीं रह सकता। **इसी प्रकार जीवन में सुखों की प्राप्ति और दुखों की निवृति के लिए सत्य व ज्ञान के मार्ग पर चलना होता है।** अब सत्य क्या है? तो पहली बात है कि ईश्वर सत्य है, हमारे माता, पिता, सगे संबंधी व हमारे सामाजिक बन्धु भी सत्य हैं। अतः हमें इन सबके प्रति सत्य अर्थात् आदर, सम्मान, प्रेम, त्याग, न्याय, पक्षपात से रहित, सेवा, दान, परोपकार, शुभकामना आदि का व्यवहार करना होगा। किसी का शोषण करना, भ्रष्ट आचरण करना, छुप कर किसी के स्वामित्व को हानि पहुंचाना और अनैतिक कार्य से सम्पत्ति अर्जित करना आदि अनुचित व असत्य कार्यों की श्रेणी में आते हैं। इनका परिणाम इस जन्म में भी और परजन्म में भी दुख व बर्बादी के अतिरिक्त कुछ नहीं होता। इसी प्रकार यह संसार परमात्मा ने सभी प्राणियों के सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए बनाया है। इसमें बाधा डालने वाले ईश्वर के अपराधी होते हैं और कर्म दण्ड के भागी होते हैं। ईश्वर द्वारा वेद में दी गई शिक्षा के अनुसार सभी को त्याग पूर्वक प्रकृति व इसके पदार्थों का उपभोग करना है। आवश्यकता से अधिक संग्रह करना या उपभोग करना अपराध है, ऐसा वेद में ईश्वर का आदेश है। जिस प्राणी द्वारा दूसरे प्राणियों को अपना न्यूनतम भाग प्राप्त करने में बाधा आती है, वह लोग दोषी और वह व्यवस्था भी अप्राकृतिक व दोषपूर्ण होती है।

प्राचीन प्रथा के अनुसार जब गुरुकुल में शिक्षा पूरी कर कोई ब्रह्मचारी दीक्षा लेता था तो आचार्य उसे भावी जीवन में **"सत्यं वद धर्मं चर"** का उपदेश देता था। यह उपदेश शाश्वत् सत्य है। इसका कोई विरोधी भी नहीं है। परन्तु इसका वैदिक मत के कुछ लोगों के अतिरिक्त अन्यों को ज्ञान ही नहीं है। आज का जो वातावरण है उसमें यह माना जाता है कि येन केन प्रकारेण अधिक से अधिक धन का उपार्जन करना है। यदि धन के उपार्जन में सत्य का हनन होता है, तो वह धन, धन या अर्थ न होकर अनर्थ होता है। धन से केवल भौतिक सुख प्राप्त होते हैं। आप मकान, कार, अच्छा भोजन, यात्रा व घूमना फिरना कर सकते हैं और अपने बच्चों के महंगी शिक्षा दे सकते हैं परन्तु क्या यही जीवन है। हमारे यहां जीवन का लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष कहा जाता है। सबसे पहले धर्म आता है जिसका किसी भी स्थिति में त्याग नहीं करना चाहिये। वेदों के महाविद्वान महर्षि मनु ने सृष्टि के आरम्भ में ही अपने ग्रंथ **'मनुस्मृति'** में घोषणा कर दी थी कि जो धर्म का पालन करता है: धर्म उसका पालन करता है जो धर्म का पालन नहीं करता धर्म भी उसका पालन नहीं करता। जो धर्म का हनन या हत्या करता है वही धर्म उचित समय पर उस धर्महन्ता की हत्या कर देता है। यदि विचार करें तो अपयश होना भी एक प्रकार से हत्या के समान ही होता है। अनुचित तरीकों से कमाये गये धन से यश प्राप्त नहीं होता और समय आने पर सारी पोल खुल जाती है। ज्ञानी व विवेकशील लोग जानते हैं कि किसी व्यक्ति के पास अधिक धन सम्पत्ति है, तो अधिकांशतः उसमें अनुचित साधनों से कमाये गये धन का प्रयोग होता व हो सकता है। अतः ऐसा कोई कार्य कभी किसी को नहीं करना चाहिये जिससे कि वर्तमान या भविष्य में कभी अपयश की स्थिति पैदा हो। धर्म का पालन करते हुए जो धन कमाया जाता है वह वस्तुतः अर्थ कहलाता है जो जीवन में सुख प्रदान करता है। इस धन से अपनी सात्विक इच्छाओं को पूरा करने के साथ परोपकार, सेवा व दान द्वारा यश प्राप्ति का प्रयास करना चाहिये। यदि ऐसा होता है तो इन तीनों के होने पर मनुष्य दुःखों से निवृत होकर मोक्ष को प्राप्त कर सकता है।

महर्षि दयानन्द के जीवन का उदाहरण हमारे सामने है। उनका सारा जीवन सत्य आचरण का उदाहरण है। उन्होंने सत्य को धारण कर एक आदर्श उपस्थित किया। माता–पिता के पास रहकर उन्हें लगा कि वह सत्य की गहराई में नहीं पहुंच सकेंगे। उन्होंने मृत्यु क्या है, यह क्यों होती है, क्या इससे बचा जा सकता है, यदि हां तो कैसे और यदि नहीं तो क्यों नहीं? इन प्रश्नों का उन्हें किसी से उत्तर नहीं मिला। उन्होंने पिता से पूछा यदि शिव लिंग के रूप वाली मूर्ति ईश्वर है तो यह अपने ऊपर से चूहों को क्यों नहीं भगा पाती? इसका तो यही अर्थ हुआ कि मूर्तिपूजा निरर्थक है। चूहों की तो बात ही क्या, जब मुहम्मद गजनी ने प्रसिद्ध सोमनाथ मंदिर व मूर्तियों को तोड़ा तो किसी मूर्ति ने कोई विरोध नहीं दिखाया। इनमें तो मधु–मक्खियों के समान भी शक्ति नहीं होती जो उन पर पत्थर फेंकने वाले पर झपट पड़ती हैं। महर्षि दयानन्द की तर्क व प्रमाणों से विवेचना से यह कृत्य अवैदिक और अलाभकारी कार्य है। यदि मूर्ति ईश्वर नहीं तो फिर ईश्वर का सत्य स्वरूप कैसा है? वह कैसे प्राप्त होता है? आदि अनेक प्रश्नों के उत्तर उनके मन में उत्पन्न हुए परन्तु उनके समाधान उनके गुरुओं व माता–पिता के पास नहीं थे। अतः उन्होंने गृह त्याग कर इन प्रश्नों के उत्तरों की खोज की जिसमें वह अन्ततोगत्वा सफल हुए। उन्होंने अनेक गुरुओं व योगियों तथा अन्ततः मथुरा के ऋषि तुल्य गुरु प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती से वेदों वा इतर आर्ष ग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त किया जिससे उनके सभी प्रश्नों व शंकाओं का उत्तर मिल गया। अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद उन्होंने सत्य का प्रचार किया जो कि वेद प्रचार का ही पर्याय है। सत्य के अर्थों के प्रकाश के लिए उन्होंने विश्व प्रसिद्ध सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ का प्रणयन किया। इसके प्रकाशन से सारे संसार में सत्य के अर्थों का प्रकाश हुआ। महाभारत काल के बाद स्वामी दयानन्द के काल तक प्रायः सभी लोग सत्यार्थ प्रकाश में वर्णित तथ्यों व सत्य से अपरिचित ही रहे और उनके जीवन में इसका अभाव रहा। सत्यार्थ प्रकाश में जिन सत्यों का प्रकाश किया गया है वह किसी एक मत, समुदाय, समाज या देश के लिए नहीं है अपितु विश्व की 7 अरब से अधिक जनसंख्या के लिए उपयोगी व जानने योग्य है। सत्यार्थ प्रकाश में प्रकाशित सत्य के अर्थों की विश्व में स्थापना व पालन से ही विश्व का कल्याण होगा और सर्वत्र सुख व शान्ति का वातावरण निर्मित होगा। परस्पर विरोधी मान्यताओं, परम्पराओं, रीति–रिवाजों, मान्यताओं तथा उपासना पद्धतियों के होते हुए विश्व का कल्याण होना एक प्रकार से मरीचिका ही सिद्ध हो रहा है व भविष्य में भी होगा। **सभी मतों के अध्ययन से यह पता चलता है कि ब्रह्माण्ड में एक ही सर्वव्यापक ईश्वर है तथा सभी मनुष्य व प्राणी उसी की सन्तानें हैं। वह सबका माता–पिता, आचार्य एवं राजा के समान है। उसी की आज्ञा का पालन करना ही मनुष्यों का कर्तव्य व धर्म है। एक ईश्वर के सभी पुत्र व पुत्रियों के लिए धर्म भी एक जैसा होना चाहिये। एकता व समानता में ही शक्ति होती है और अनेकता व असमानता में अशान्ति, संघर्ष व दुःख आदि हुआ करते हैं। अतः सत्य मार्ग पर चलना सभी के लिए उचित है। सत्य एक ही हुआ करता है, और असत्य अनेक हो सकते हैं। अतः एक सत्य की पहचान करना सबके लिए अत्यावश्यक है।**

एक विद्यार्थी सत्य ग्रन्थों को पढ़कर ज्ञानी होता है और जीवन के सभी क्षेत्रों में सफल होता है। वह वैज्ञानिक, इंजीनियर, डाक्टर, व्यवसायी आदि हो सकता है **उसी प्रकार से धर्म के क्षेत्र में भी सत्य को जानकर उसका अनुसरण करने से ही जीवन में सफलता मिलती है।** दर्शन में कहा गया है कि जिन कर्मों को करने से जीवन में अभ्युदय होता है और मृत्यु होने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है, उन कर्मों व जीवन शैली का नाम धर्म है। अभ्युदय व निःश्रेयस प्रदान करने वाले कर्मों तथा सत्य क्रियायें या सद्कर्म ही होते हैं। **आइये, जीवन में सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग का व्रत लें और अपने जीव का सफल बनायें।**

196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः 09412985121

thearyasamaj.org

भारत के आधुनिक इतिहास के प्रवाह को नया मोड़ देने वाले तेजस्वी बलिदानी सिख गुरु तेगबहादुर

● हरिकृष्ण निगम

आज के कई दशक पहले मैं दिल्ली में रहता था और जब भी वहाँ के प्रसिद्ध गुरुद्वारा रकाबगंज के सामने से निकलता था तब दूसरे अनेक श्रद्धालुओं की तरह सड़क से ही स्वतः आँखें झुक जातीं और उनके प्रति आदर से हाथ जोड़ लेता था। सिख गुरु तेगबहादुर के बलिदान से जुड़े इस पवित्र स्थल के बारे में इससे अधिक जानने का मैंने कभी कोई प्रयास नहीं किया था। पर हाल में जब मैंने प्रसिद्ध लेखक व साहित्यकार डा. किशोरी लाल व्यास 'नीलकण्ठ' का 'खालसा' नाटक व उसकी भूमिका पढ़ी तब मैं कुछ ऐतिहासिक सत्यों को जानकर स्तब्ध सा रहा गया था। नवें सिख गुरु तेगबहादुर के शीश कटने के बाद एक लखी शाह नाम का बंजारा था जो उनके धड़ को अंधेरे का लाभ उठाकर ले गया और अपनी रूई भरी बैलगाड़ी पर ही शीश–विहीन धड़ का संस्कार कर दिया था। जिस स्थान पर बंजारे ने गुरुजी का अन्तिम संस्कार किया था वहीं पर यह गुरुद्वारा रकाबगंज निर्मित हुआ था। इस गुरुद्वारे के एक विशाल सभागृह में, जिसका नाम लखी बंजारा हॉल है, उसी की स्मृति को भी अक्षुण्ण रखा गया है।

वीरता और शौर्यपूर्ण सिखों का पहले मुगलों और बाद में अंग्रेजों के साथ संघर्ष के इतिहास में अनेक लोमहर्षक प्रसंग हुए जिनका वर्णन किसी भी देशवासी के हृदय को, तेजस्वी गुरुओं को दी गई भयावह यातनाओं और उस समय हिन्दुओं को बचाने के लिए दिए गए बलिदानों के कारण, दहला सकता है।

गुरु तेगबहादुर की मृत्यु के बाद उनके पुत्र गुरु गोविन्द सिंह दशम् सिख गुरु बने जिन्होंने खालसा पंथ की स्थापना के संदर्भ में समस्त सिख समुदाय को पंथ की दीक्षा देकर उनकी मानसिकता में आमूल चूल रूपान्तरण कर दिया। हिन्दू–सिख दोनों का संरक्षण करने के लिए जब भी मुगलों व सिखों में युद्ध भड़कता था कि वे देश का दाहिना हाथ बनकर उठ खड़े होते थे। गुरु गोविन्द सिंह की मृत्यु के बाद उनके उत्तराधिकारी ने यह संघर्ष तब तक जारी रखा जब तक औरंगजेब की मृत्यु 80 वर्ष की आयु में अहमदनगर में 1707 में न हो गई। धर्मान्ध महत्वाकांक्षी, कट्टर सुन्नी यह क्रूर शहंशाह अपने भाइयों की हत्या कर सिंहासन पर बैठा और बाद में स्वयं अपने पिता को बंदी बना कर रखा जो देश के लिए एक भूकम्प जैसी घटना से कम नहीं थी।

जब औरंगजेब ने हिन्दुस्तान को पूरी तरह इस्लामी राज्य बनाने की ठान ली थी और जब अकबर की नीतियों के विरुद्ध उसे इस्लाम का जुनून सवार हो चुका था, देश में अंधकार छा गया था। तलवार के बल पर धर्मान्तरण, जजिया, हिन्दुओं के सार्वजनिक उत्सवों पर प्रतिबन्ध, काफिरों के मन्दिरों व तीर्थों का विध्वंश अबाध गति से हो रहा था और उत्तरी क्षेत्रों व राजस्थान से लेकर गुजरात तक उसका आतंक फैला हुआ था। यह बात भुलाई नहीं जा सकती है कि दक्षिण की रियासतों जैसे बीजापुर के आदिलशाही समृद्ध महलों की दीवारों के शिलालेखों, भित्तिचित्रों व बहुमूल्य कलासामग्रियों को सिर्फ इसलिए मटियामेट किया गया था क्योंकि बीजापुर व गोलकुण्डा के शासक शिया थे। गोलकुण्डा के किले के अन्दर के हजारों शियाओं को मुगल सैनिकों ने बेरहमी से मार डाला था।

औरंगजेब अपनी युवावस्था से ही कुचक्री था और इसीलिए शाहजहां ने उसे दक्षिण का सूबेदार बनाकर भेजा था। सबसे बड़ा पुत्र दाराशिकोह क्योंकि अनेक हिन्दू पवित्र ग्रंथों का उसने फारसी में अनुवाद कराया था, और सहिष्णु विद्वान भी था और शाहजहाँ का चहेता था उसका सिर कटवा कर दिल्ली दरवाजे पर लटकाया गया था। अपने दूसरे भाइयों मुराद व शुजा को भी मारकर उसने अपने रक्त रंजित हाथों से मुगलिया सल्तनत हासिल की थी। अपने सबसे बड़े पुत्र मुहम्मद सुल्तान को भी उसने ग्वालियर के किले में 12 वर्ष बन्दी बना कर रखा था जहां 38 वर्ष की उम्र में ही उसकी मृत्यु हो गई थी। हिन्दुओं, सिखों, राजपूतों, शियाओं, इस्माइलियों, बोहरा आदि के साथ जब औरंगजेब ने अपनी बहन तथा बेटी जेबुन्निसा को भी कैद में डाल दिया था उसके बाद से उसे जल्लादों का जल्लाद तक कहा जाने लगा था।

औरंगजेब आजीवन इस प्रयत्न में रहा कि सिखों के गुरु यदि इस्लाम कबूल कर लें तो सिखों का बड़ा समुदाय स्वयमेव मुसलमान बन जाएगा। पर सिखों ने पीढ़ी दर पीढ़ी बलिदान देकर औरंगजेब की आकांक्षा को विफल कर दिया था। उनका सारा इतिहास बलिदानों का इतिवृत्त रहा है जो कश्मीर के ब्राह्मणों पर औरंगजेब द्वारा अत्याचारों व सहस्त्रों की हत्या के साथ वस्तुतः शुरू होता है। कहते हैं– 'जब मरे हुए ब्राह्मणों' के जनेयू का वजन बारह सेर होता था तभी औरंगजेब खाना खाता था" अनेको ने आत्महत्या की, पलायन किया या इस्लाम कबूल कर लिया था।

तब ब्राह्मणों का प्रतिनिधि मण्डल सिखों के नवम गुरु तेगबहादुर, जिन्हें वे तेजस्वी महापुरुष मानते थे, की शरण में पहुंचा, जो उस समय ध्यानावस्थित थे और स्वयं उस विकट परिस्थिति में बलिदान की आवश्यकता उस मुगल दर्प को समाप्त करने के लिए हल बताने लगे। सभी लोग हतप्रभ थे। तभी दस वर्षीय गुरुगोविन्द सिंह, जो वहां बैठे थे, कह उठे– पिता श्री इस समय आप से बढ़कर तेजस्वी पुरुष कौन है।

गुरु तेगबहादुर जी को लगा कि बालक की बात सच है और वे स्वयं औरंगजेब से मिलकर उसे समझाने के लिए प्रस्तुत हो गए। पण्डितों ने धैर्य की सांस ली जब गुरु तेगबहादुर अपने पांच शिष्यों के साथ दिल्ली के लिए निकल पड़े जहाँ उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। उनके नाम थे भाई मतीदास, भाई दयाला, भाई सतीदास! गुरु जी की आंखों के सामने एक–एक शिष्य को समाप्त किया गया ताकि उन्हें सदमा लगे। भाई मतीदास को एक बड़े आरे से चिरवाया गया, भाई दयाला को एक बड़ी देगची में उबलते पानी में फेंक दिया गया, भाई सतीदास को चारों और रुई में लपेट लगा दी गई। मरने के क्षण तक ये श्रद्धालु भक्त जपुजी, सुखमनी आदि का पाठ करते रहे। गुरु जी ने शान्त होकर ये वीभत्स दृश्य देखे और अपना धर्म बदलना नामंजूर कर दिया। तब दिल्ली के चांदनी चौक में सभी लोगों के समक्ष गुरु जी के कत्ल का आदेश दिया गया। यह घटना 1675 ई. की है जब गुरुजी की आयु 53 वर्ष की थी।

बीच बाजार में बिठाकर मौलवियों ने गुरुजी से व्यंगपूर्ण स्वर में कुछ चमत्कार दिखाने का आग्रह किया। गुरु जी ने कहा, मैं कोई चमत्कारी पुरुष नहीं। गले में बंधी रस्सी को इंगित कर उन्होंने कहा– यही मेरा चमत्कार है। जल्लाद ने मौलवियों के आदेश पर एक ही झटके में तलवार से उनका सिर धड़ से अलग कर दिया। जब दर्शकों में हाहाकार मचा था, एक शिष्य ने अचानक जान जोखिम में डालकर गुरु जी का सिर लेकर गायब कर दिया। उस सिर को लेकर वह आनन्दपुर पहुंचा। गोविन्द सिंह ने उसका दाहसंस्कार किया। औरंगजेब की आज्ञा से 'हिन्दू धर्म' की ढाल बने गुरुजी का बलिदान हुआ। आज दिल्ली में उसी स्थान पर 'शीशगंज' गुरुद्वारा बना हुआ है। गुरु गोविन्द सिंह जी ने मुगलों की सेना से भिड़ने के त्याग, तपस्या, साधना, संगठन व अस्त्र शस्त्र सभी क्षेत्रों में सिखों के आत्मबल को जगाया। जहाँ पहले के गुरु भक्ति पद्धति में शक्ति की आराधना को समन्वित करते थे, गुरुगोविन्द सिंह स्वयं दो तलवार धारण करते थे– एक 'पीरी', दूसरी 'मीरी'। शत्रु के राज्य में शक्ति की उपासना अनिवार्य है, यह उनका मत था।

अपने अनुयाईयों से गुरुजी ने कहा– कि वे तलवार को ईश्वर और ईश्वर को ही तलवार मानें। उन्होंने लोहे को सबसे पवित्र बताया। उनकी प्रसिद्ध कृति 'चंडी चरित्र' में उन्होंने यहां तक कहा था– मैं शुभ कर्मों से कभी न डरूँ और युद्ध में जुझता मर जाऊँ। गुरु गोविन्द सिंह जी ने युद्ध को धर्म से समन्वित कर दिया था, उनके दो पुत्र अजीत सिंह और ज़ुझार सिंह मुगलों के साथ युद्ध में मारे गये थे। दो अन्य पुत्रों जोरावर सिंह (9 वर्ष) और फतह सिंह (7 वर्ष) को सरहिन्द के सूबेदार वजीर खान ने इस्लाम स्वीकार न करने के कारण दीवार में चुनवा दिया था। चार–चार वीर पुत्रों को खोकर भी गोविन्द सिंह जी ने हिम्मत न हारी थी– "चार मुए तो क्या हुआ जीवित कई हजार!"

फिर 12 अप्रैल 1699 का वह दिन आया जब विभिन्न प्रदेशों से सिख आनन्दपुर आ पहुंचे। वह बैसाखी का दिन था जब गुरु गोविन्द सिंह कृपाण के साथ मंच पर पहुंचे। उन्होंने कहा देवी बलिदान चाहती है? क्या कोई शीश देगा, सहसा लाहौर का खत्री दयाराम उठा जिसे वह पर्दे के पीछे ले गए। एक बकरे की बलि चढ़ाई और रक्त से सनी तलवार लिए बाहर आ गए। फिर उसी प्रश्न पर दिल्ली के जाट धरम दास उठ खड़े हुए। उन्हें भी गुरु जी अन्दर ले गए और रक्त से सनी तलवार लेकर बाहर आ गए। इसी तरह का प्रश्न दोहराने पर एक के बाद एक– मोहकमचन्द, साईबचन्द तथा हिम्मतराम उठे जिन्हें गुरु जी अन्दर ले गए। फिर सभी पांचों को अपने साथ लेकर मंच पर आए। उन्होंने कहा मैंने उन्हें मारा नहीं– ये ही पांचों बलिदानी –पंज प्यारे हैं– पांच सिंह है। ये ही विशुद्ध खालसा–बलिदानी वीर हैं। उस समय 80,000 सिक्खों ने अमृतपान कर खालसा पंथ का निर्माण किया था जो सदैव कफन सिर पर बांधे युद्ध के लिए तत्पर रहते थे।

इस प्रकार धर्म की रक्षा के लिए गुरु गोविन्द सिंह जी ने जिस पंथ का निर्माण किया, उसने मुसलमानों की बाढ़ को रोकने में सफलता पाई। देश के इतिहास में वस्तुतः गुरु गोविन्द सिंह जैसा व्यक्तित्व ढूंढ पाना असम्भव है– एक वीर, तपस्वी और कवि के साथ–साथ पंजाबी, ब्रज, फ़ारसी और अरबी आदि भाषाओं पर असाधारण अधिकार रखे ऐसा विविध

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

thearyasamaj.org

समाज सुधारक स्वामी दयानंद सरस्वती

● डॉ. रमा

वैदिक विचारधारा के आधार पर सामाजिक निर्मिति के लिए निरंतर कार्य करने वाले स्वामी दयानन्द सरस्वती एक ओर जहाँ आर्य–संस्कृति तथा धर्म की स्थापना का कार्य कर रहे थे वहीं दूसरी ओर तत्कालीन समाज में विद्यमान कुरीतियों, अंधविश्वासों और रूढ़ियों को जड़ से उखाड़ने की प्रक्रिया को गति देने का काम भी कर रहे थे। उनका स्वर प्रगतिशील था और दृष्टि यथार्थवादी। उन्होंने हर उस चीज को खारिज किया है जो यथार्थबोध और आत्मा के प्रतिकूल थी। वेद और भक्तजनों के मतों के विरुद्ध जो भी बातें थीं उसे उन्होंने अस्वीकार किया। उन्होंने निरंतर समाज में व्याप्त रूढ़ियों का, बुराइयों का विरोध किया और उसे समाप्त करने के उपाय ढूंढे। यही कारण था कि समाज के रूढ़िवादी लोग जो बुराई, कुरीति, आडम्बर को ही सत्य मान रहे थे, इनके शत्रु हो गए। इनके प्राण लेने तक की सोचने लगे, परन्तु समाजसुधारक के अपने कार्यों मे स्वामी जी निरंतर जुटे रहे।

महर्षि दयानन्द ने तत्कालीन समाज में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों तथा अन्धविश्वासों और रूढ़ियों–बुराईयों को दूर करने के लिए, निर्भय होकर उन पर आक्रमण किया। वे 'संन्यासी योद्धा' कहलाए। उन्होंने जन्मना जाति का विरोध किया तथा कर्म के आधार पर वेदानुकूल वर्ण–निर्धारण की बात कही। वे दलितोद्धार के पक्षधर थे। उन्होंने स्त्रियों की शिक्षा के लिए प्रबल आन्दोलन चलाया। उन्होंने बाल विवाह और सती प्रथा का निषेध किया तथा विधवा विवाह का समर्थन किया। वे सामाजिक पुनर्गठन में सभी वर्णों तथा स्त्रियों की भागीदारी के पक्षधर थे। राष्ट्रीय जागरण की दिशा में उन्होंने सामाजिक क्रान्ति तथा आध्यात्मिक पुनरुत्थान के मार्ग को अपनाया। उनकी शिक्षा सम्बन्धी धारणाओं में प्रदर्शित दूरदर्शिता, देशभक्ति तथा व्यवहारिकता पूर्णतया प्रासंगिक तथा युगानुकूल है। उनके कार्यों और योगदान को देखते हुए डॉ. भगवानदास ने कहा था कि स्वामी दयानन्द हिन्दू पुनर्जागरण के मुख्य निर्माता थे। वहीं पाश्चात्य लेखक रिचर्ड का कहना था कि ऋषि दयानन्द का प्रादुर्भाव लोगों को कारागार से मुक्त कराने और जाति बन्धन तोड़ने के लिए हुआ था। उनका आदर्श है– आर्यावर्त! उठ, जाग, आगे बढ़। समय आ गया है, नये युग में प्रवेश कर। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने उन्हें आधुनिक भारत का निर्माता माना।

10 अप्रैल, 1875 ई. को स्वामी दयानन्द सरस्वती ने बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की थी। 19वीं सदी के सुधारवादी आन्दोलनों में आर्य समाज अपना प्रमुख स्थान रखता है। स्वामी दयानन्द के अवतीर्ण होने से पूर्व हिन्दुत्व जर्जर हो चुका था और उसमें अनेक आडम्बरों, कर्मकाण्डों एवं रूढ़ियों ने प्रवेश कर लिया था। ईसाई और इस्लाम धर्म प्रचारक हिन्दू धर्म का खुला उपहास उड़ा रहे थे एवं अपने धर्म का प्रचार कर रहे थे। केशवचन्द्र सेन के ब्रह्म समाज का झुकाव भी ईसाई धर्म की तरफ था। इन परिस्थितियों में स्वामी दयानन्द ने हिन्दू धर्म में व्याप्त बुराईयों को दूर करते हुए हिन्दुओं का ध्यान उनके धर्म के मूल स्वरूप की ओर आकृष्ट किया। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि भारतीय संस्कृति विश्व की श्रेष्ठतम् संस्कृति है। उनकी धारणा थी कि हिन्दू धर्म ही सच्चा धर्म है तथा वेद ज्ञान के भण्डार हैं। स्वामी दयानन्द का मानना था कि यदि वैदिक धर्म की बुराईयों को दूर करके उसे पुनः प्रतिष्ठित किया जाए, तो भारत पुनः विश्व का गुरु बनने में सक्षम है। उन्होंने हिन्दू धर्म में नए प्राण फूंक दिए। रोमा रोला के शब्दों में, दयानन्द इलियड् अथवा गीता के प्रमुख वाचक के समान थे, जिसने हरक्युलिस की शक्ति के साथ हिन्दू अन्धविश्वासों पर प्रबल प्रहार किया। वस्तुतः शंकराचार्य के बाद इतनी महान् बुद्धि का सन्त दूसरा नहीं जन्मा। रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार, स्वामी दयानन्द सरस्वती आधुनिक भारत के एक महान् पथ–दर्शक थे। इसी तरह भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के अनुसार स्वामी दयानंद एक महान संत थे, वास्तव में महर्षि थे। वे इस धरती पर मानवता की महान सेवा के लिए अवतरित हुए। उन्होंने करोड़ों लोगों को वैदिक मान्यताओं से युक्त दृष्टि प्रदान की। वे भारतीय संस्कृति के सर्वोत्तम मूल्यों को अपने में समाहित किए हुए थे। हम सबको उनके कार्यों को आगे बढ़ाने का संकल्प लेना चाहिए।

स्वामी दयानंद ने हिन्दू धर्म में व्यास घोर अंधविश्वास व कुरीतियों को दूर करने के लिए सतत प्रयास किया, जैसे– मूर्ति–पूजा, अवतारवाद, बहुदेव–पूजा, पशुता का व्यवहार व विचार और अंधविश्वासी धार्मिक काव्य आदि। उन्होंने एकेश्वरवाद का प्रचार किया और अपने उत्तम विचार व्यक्त किए। ईश्वर सर्वज्ञ–सर्वत्र व्याप्त, निर्विकार, रूप रहित, आकार रहित, दयालु और न्यायी है। वह विश्वास करते थे कि ईश्वर को समझा व जाना जा सकता है; वह ईश्वर सर्वोच्च गुणों से युक्त है तथा भ्रांत रहित ईश्वर की पूजा से ही लोगों में नैतिकता का प्रादुर्भाव हो सकता है। स्वामी दयानन्द की प्रेरणा वेद थे। यह विश्वास करते हुए कि ईश्वर अनंत है, उन्होंने पुनः वेदों के अध्ययन–मनन की ओर लोगों को लौटने की प्रेरणा देना प्रारंभ किया। उनका उद्‌देश्य भारत के अतीत को गौरवान्वित करना तथा लोगों की चेतना को अंतर्मन से जागृत करना था। धर्म और जाति पर आधारित बहुत–सी बुराईयों तथा अंधविश्वास पर चोट करते हुए और उसके शुद्धिकरण के लिए स्वामी दयानन्द ने कहा कि जो अपने कार्य व व्यवहार से ब्राह्मण तुल्य व्यवहार करता है वही श्रेष्ठ है न कि जन्म जाति के आधार पर। उन्होंने जनसमूह को सच्चाई से अवगत कराया कि छुआछूत की भावना या व्यवहार एक अपराध है जो कि वेदों के सिद्धांत के विपरीत है। बाल–विवाह का विरोध करते हुए वर–कन्या दोनों के विवाह की आयु क्रमशः पच्चीस व सोलह वर्ष की निश्चित की। उन्होंने विधवा–विवाह के लिए भी लोगों में उत्साह भरा। चरित्र–विकास के लिए शिक्षा महत्वपूर्ण है, यह विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने बालक–बालिकाओं की शिक्षा के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने का कार्य किया।

स्वामी दयानंद सरस्वती जी ने अपने जीवन–पर्यंत इस बात का प्रयास किया कि विश्वभर के सारे विद्वान एकमत होकर सर्वसम्मत धर्म को स्वीकार कर लें और विवादग्रस्त बातों का छोड़ दे। जिससे सर्वसाधारण उनका अनुकरण करके सुख–शांति और पारस्परिक प्रेम का जीवन व्यतीत कर सके। 'उदार चरितानां तु वसुधैव कटुम्बकम्' के अनुसार स्वामी जी के लिए सारा संसार ही अपना कुटुम्ब था कोई पराया न था। उनका विश्वास था कि वेदों को अब तक संजोए रखने वाली भारत की आर्य–जाति का सुधार हो जाने से संसार का कल्याण होगा। स्वामी जी प्राचीन काल के समान ही फिर संसार को वैदिक शिक्षा देकर संमार्ग पर लाने की आकांक्षी थे। इसीलिए उन्होंने सर्वप्रथम अपनी जन्मभूमि भारत को ही अपना कार्य–क्षेत्र बनाया।

स्वामी दयानंद सरस्वती सर्वदा सत्य के लिए जूझते रहे, सत्याग्रह करते रहे। उन्होंने अपने उद्देश्य प्राप्ति के लिए कभी हेय और अवांछनीय साधन नहीं अपनाए। स्वामी जी ने आने वाली पीढ़ी के सोचने के लिए देश, जाति और समाज के सुधार, उत्थान और संगठन के लिए आवश्यक एक भी बात या पक्ष अछूता नहीं छोड़ा। वे प्रत्येक की पूर्ति के लिए मनसा, वाचा, कर्मणा मरण–पर्यंत प्रयत्नशील रहे। उन्होंने अपने उपदेशों, लेखों द्वारा और लोगों के सम्मुख अपना पावन आदर्श तथा श्रेष्ठ चरित्र उपस्थित करके देश में जागृति उत्पन्न कर दी, जिससे भावी राजनीतिक नेताओं का कार्य बहुत ही सुगम व सरल हो गया। निस्संदेह स्वामी दयानन्द सरस्वती राष्ट्र–निर्माता थे।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के समय तक मनु द्वारा रचित समाज की वर्ण–व्यवस्था पूरी तरह से छिन्न–भिन्न हो चुकी थी, कर्म के आधार पर स्थापित सामाजिक व्यवस्था को अपदस्थ कर जन्म के आधार को स्वीकार किया जा चुका था। स्वामी जी ने इसके विरोध में आवाज़ उठाई और इसे कर्म के आधार पर स्थापित किया। उन्होंने इस अव्यवस्था को दूर करने के लिए गुण, कर्म एवं स्वभावानुसार वर्ण–विभाजन, पर बल दिया जिससे सार्वभौम भाईचारे के प्रचार को बल मिला। ऐसे में तब जबकि वर्ण को गुण, कर्म और स्वभाव के आधार पर स्वीकार कर जन्म के आधार को अस्वीकार कर दिया गया तो जातिभेद को भी गहरा धक्का लगा और समानता की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिला। उन्होंने सभी को यही सन्देश दिया कि अच्छे कार्य ही मनुष्य के पूजनीय होने का आधार हो सकता है। जाति नीच नहीं गुण, कर्म, स्वभाव से जो नीच है वही नीच है। उनके अनुसार सब मनुष्य समान है। ईश्वर ने सभी को शुभ कर्मों द्वारा मोक्ष को, परम–सुख को प्राप्त करने के लिए ही मानव जन्म दिया है। उन्होंने विवेक, विद्या, सुविचार, क्षमा, दया, सज्जनता, उदारता, सदाचार, परोपकार को ही मानव की कुलीनता का द्योतक माना है।

उन्होंने अस्पृश्यता का भी जमकर विरोध किया। उन्होंने कहा कि शूद्र के हाथ की बनाई हुई चीज खाएं। दुष्ट कर्म वाले के हाथ का बना भोजन न करने की सलाह देते हुए उन्होंने कहा कि –

दुष्ट कर्म, स्वभाव वाला,
तुम समझो अस्पृश्य रे भाई
शूद्र–जन्म लेकर, जो सुकर्मी,
गुणज्ञ, वह कुलीन कहाई।

महर्षि दयानन्द ने वैदिक धर्म की रक्षा करने के लिए वेदमंत्रों के उच्चारण द्वारा और होम करके सभी को आर्य बना लेने का रास्ता दिखाया है। उन्होंने शुद्धि के

शेष पृष्ठ 11 पर

शुभ नवसम्वत्सर

● डॉ. सुशील वर्मा

31 दिसम्बर की रात्रि को नववर्ष आगमन पर पूरे विश्व में समारोह आयोजित किए जाते हैं। मात्र इसलिए कि 2000 वर्ष बीत चुके हैं ईसा मसीह को पैदा हुए। इस नववर्ष का क्या औचित्य है? नववर्ष किस का हुआ? सृष्टि रचना का, संस्कृति का अथवा अन्य कारण से।

इस्लामी कालगणना तो मात्र 1431 वर्षों (हिजरी वर्ष) तक सीमित है। ईसाई 2015 वर्ष, रोमन 2763, यूनानी 3586 वर्ष, यहूदी 5775 वर्ष, तुर्की 7621 वर्ष। इसी प्रकार मिश्री लोक 28674 वर्ष से अपने अस्तित्व को स्मरण किए संजोए रखा है। पारसी अपना अस्तित्व 198878 वर्ष और इससे भी प्राचीन चीनी कालगणना 9,60,02,311 वर्ष और प्राचीनतम भारतीय कालगणना जिसका इस समय 1,96,08,53,115 वर्ष चल रहा है। गर्व है हमें अपनी भारतीय संस्कृति पर।

भारतीय कालगणना मात्र प्राचीनतम ही नहीं, अपितु यह गणना काल से सम्बन्धित और खगोल शास्त्र पर आधारित है। न यह देश विशेष, जाति विशेष से या घटना विशेष से अनुबद्ध है, यह तो प्राकृतिक, नैसर्गिक एवं उन्नत दिव्यता का उत्सव है। यह हमारा सौभाग्य है कि ऋषि मुनियों द्वारा प्रदत्त परम्परा को भारतीय समाज अपने हर पर्व पर, अनुष्ठानों के अवसरों पर, व्यापारी वर्ग अपने बही–खातों में, यह गणना संकल्प रूप में दोहराते आए हैं। चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को आज से **1,96,08,53,115** वर्ष पूर्व प्रथम मानव का भारत में प्रादुर्भाव हुआ। प्रथम सूर्य दर्शन से ही यह गणना प्रारम्भ हुई। भारतीय गणना के अनुसार इसी पृथ्वी पर सृष्टि की आयु 4,32,00,00,000 वर्ष है। यह गणना ऋग्वेद, यजुर्वेद, मनुस्मृति व पुराणों में एक जैसी है। बाद में विश्व के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों आर्य भट्ट, भास्कराचार्य, वराहमिहिर और ब्रह्मगुप्त आदि ने इसका प्रतिपादन अपने ग्रन्थों में किया।

हमारे मनीषियों की कालगणना की विलक्षणता तो देखिए, काल की सबसे छोटी इकाई **त्रुटि** है जो कि एक सेकंड का 33,750 वाँ भाग है। चाहे हम आज विज्ञान को उच्च कोटि का मानते हैं परन्तु उनकी गणना तो आज तक भी यहाँ तक नहीं पहुँच पाई।

महर्षि दयानन्द कृत ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के अनुसार सृष्टि एवं वेदों की उत्पत्ति 6 मन्वन्तर व सातवें की 27 चतुर्युगी बीत चुकी है। 28वीं चतुर्युगी के प्रथम 3 युग–सतयुग, त्रेता, द्वापर बीत चुके हैं और कलियुग के 5115 वर्ष समाप्त होकर नव सम्वत्सर 21 मार्च 2015 को प्रारम्भ होगा। कलियुग का प्रारम्भ 3111 वर्ष ईसा पूर्व 20 फरवरी को 2 बज कर 26 मिनट 30 सेकंड पर हुआ। उस समय सभी ग्रह एक ही राशि में थे। कलियुग की अवधि 4 लाख, 32 हजार वर्ष की है। द्वापर की इससे दो गुणी, त्रेता की तीन गुणा, व सतयुग की चार गुणा।

सृष्टि व वेद की उत्पत्ति के व्यतीत समय की गणना इस प्रकार है।

1.	6 मन्वन्तर = 6×71×43,20,000 = 1,84,03,20,000 वर्ष			
	प्रत्येक मन्वन्तर 71 चतुर्युगी का होता है।			
2.	27 चतुर्युगी = 27,43,20,000 = 11,66,40,000 वर्ष			
3.	सतयुग = 27,28,000 त्रैता = 12,96,000 वर्ष			
				1,84,03,20,000
				11,66,40,000
				17,28,000
	द्वापर = 08,64,000, कलियुग = 5115 वर्ष			12,96,000
				08,64,000
				5115
	अतः कुल व्यतीत समय = 1,96,08,53,115 वर्ष			**1,96,08,53,115**

(एक अरब, 96 करोड, 08 लाख, 53 हजार 115 वर्ष)

आज हम 21 मार्च 2015 को नववर्ष का स्वागत कर रहे हैं। क्यों? इसलिए कि आज के दिन ही (चैत्र शुक्ल प्रतिपदा)

1) सृष्टि रचना व वेदोत्पत्ति का शुभारम्भ हुआ।
2) प्रथम सूर्य दर्शन मानव ने इसी दिन किया।
3) मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम चन्द्र जी का राज्याभिषेक इसी दिन हुआ।
4) महाराजा विक्रमादित्य द्वारा विक्रमी सम्वत् यहीं से प्रारंभ हुआ।
5) महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आज ही के दिन आर्य समाज की स्थापना की। प्रथम आर्यसमाज काकड़वाड़ी (मुम्बई) में स्थापित हुआ।
6) राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डा. केशव बलिराम हेड़गेवार का जन्म दिवस एवं संघ स्थापना दिवस है।
7) संत झूलेलाल का जन्म दिवस आज ही है।

इतना गौरवमयी, वैज्ञानिक व खगोल शास्त्र पर आधारित नववर्ष का आगमन हम सभी हर्षोल्लास से करें। इन्हीं दिनों में प्रकृति अपनी छटा बिखेर रही होती है। पुष्प पल्लवित हो रहे होते हैं इस अवसर पर आओ हम सभी प्रातः काल उदय होते हुए सूर्य के दर्शन कर शुभ दिन का स्वागत करें न कि रात के अन्धेरे में मद्य–पान करते हुए। हम राष्ट्रस्वाभिमान को जाग्रत करने वाले इस पृष्ठभूमि के पर्व पर राष्ट्र को समृद्ध व सामर्थ्यशाली बनाने का संकल्प लें। आज का दिन ही हमारी सृष्टि रचना, वेदोत्पत्ति का पर्व है, न कि 31 दिसम्बर की अर्धरात्रि का दिन का प्रारंभ तो सूर्य उदय से है न कि अर्धरात्रि से।

आओ पराधीनता की मानसिकता को दूर कर राष्ट्रीय गौरव व स्वाभिमान को जागृत करें।

वैदिक प्रवक्ता,
संरक्षक, आर्य समाज, फाजिल्का (पंजाब)
मो. 09217832632

☞ पृष्ठ 07 का शेष

भारत के आधुनिक...

भाषाओं का ज्ञाता कहाँ मिल सकता है। इस सन्त, सैनिक और कवि का देहावसान 18 अक्टूबर सन् 1708 को केवल 42 वर्ष की अल्पायु में गोदावरी के तट पर महाराष्ट्र के नान्देड़ नामक स्थान पर हुआ था जहाँ का भव्य गुरुद्वारा एक तीर्थस्थल भी बन चुका है। उन्होंने धर्म को राष्ट्रीयता से जोड़कर उत्तर भारत में इतिहास की धारा को ही एक नया मोड़ दिया था।

गुरु गोविन्द सिंह के संगठन के पीछे की ऐतिहासिक भूमिका गुरु तेग बहादुर का बलिदान कार्य कर रहा था जिसकी ऊपर चर्चा की गई है। कालान्तर में गुरु गोविन्द सिंह जी ने बलिदानी सिखों की वह खालसा सेना तैयार की थी जिसने हर मुगल शासक की विशाल फौज से टक्कर लेने में कोई झिझक नहीं दिखाई थी।

ए–1002, पंचशील हाईट्स
महावीर नगर, कान्दिवली (प)
मुम्बई–400067, मो. 9820215464

कोटा में महर्षि दयानन्द बोधोत्सव समारोह पूर्वक मनाया

कोटा की समस्त समाजों द्वारा संयुक्त रूप से शिवरात्रि समारोह मनाया गया। ऋषि बोधत्सव के इस कार्यक्रम में विशेष यज्ञ का आयोजन किया गया जिसके पुरोहित पं. जे.एस.दुबे थे तथा यजमाता कौशल रस्तोगी एवं परिवार था। साथ ही उपस्थित आर्य जनों ने यज्ञ में आहुतियां दी।

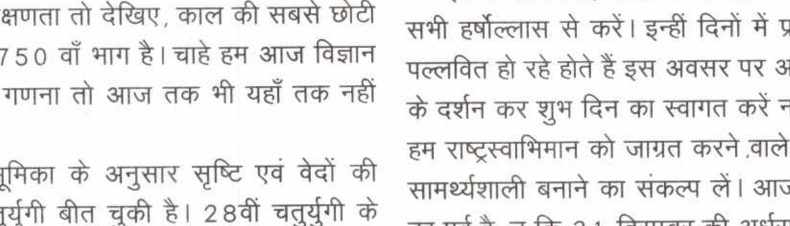

कार्यक्रम में बोलते हुए आर्य समाज जिला सभा प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने का कि स्वामी ने अंधविश्वास एवं पाखण्ड को समाज के विकास में बाधक बतलाया साथ ही सामाजिक कुरुतियों के उन्मूलन हेतु अलख जागाई। समारोह में श्रीमती उषा भटनागर, श्रीमती मालती बहन श्री भैरूलाल एवं सुश्री प्रगति आर्य द्वारा महर्षि दयानन्द के बोध दिवस से संबंधित घटना का वर्णन करने वाले भजन प्रस्तुत किए।

इस अवसर पर कार्यक्रम के संचालक अरविंद पाण्डेय, अध्यक्ष, वेद प्रचार समिति कोटा ने कहा कि शिवरात्रि की घटना ने स्वामी दयानन्द को ईश्वर प्राप्ति के लिए किया। बहन एवं चाचा की मृत्यु ने उनके अंदर तीव्र वैराग्य का प्रकाश किया।

आर्य समाज के प्रधान जे.एस.दुबे ने कार्यक्रम में पधारे आर्य विद्वानों, सभी आर्य समाज के पदाधिकारियों, सदस्यों एवं उपस्थित महिला–पुरूषों का आभार प्रदर्शित किया। शांति पाठ एवं ऋषि जयघोष के साथ कार्यक्रम संपन्न हुआ।

thearyasamaj.org

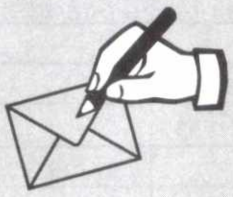

पत्र/कविता

वेद हो तो कैसा हो!

मेरे निंगेश्वर मंदिर के ओंकार पुस्तकालय में सर्वाधिक पढ़ी जाने वाली पुस्तकें हैं–सत्यार्थ प्रकाश, भारत भारती, रश्मि रथी, चित्रलेखा, गांधीवध क्यों, नापाक नेहरु, वैदिक संपत्ति, भारतीय इतिहास की भयंकर भूलें, श्री कृष्ण–गुरुदत्त, महर्षि दयानंद–इंद्र विद्या वाचस्पति, दयानंद और विवेकानंद–भवानी लाल भारतीय, विशुद्ध मनुस्मति, संक्षिप्त वा. रामायण, दयानंद शास्त्रार्थ संग्रह, उपदेश मंजरी, जीवन दर्शन–योगर्षि रामदेव आदि। ऐसा इसलिए भी कि मैं इन्हीं पुस्तकों को पढ़ने तथा आधे मूल्य पर खरीद कर घर भी ले जाने का जोर देता हूँ।

मेरे पुस्तकालय में कुरान, बाइबल और चारों वेद (आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट) भी हैं। ये तीनों धर्म ग्रंथ पच्चीस–तीस वर्षों से रहते हुए भी सदाबहार–सा नौजवान बने हुए हैं।

इन तीनों में भी सर्वाधिक आकर्षक, मजबूत और सीधा–सादा दिखता है–कुरान और बाइबल। क्योंकि एक जिल्द में ही संपूर्ण होने से कोई भी इसे ही पहली नजर में अपना लेना चाहता है, किंतु अंदर के अबूझ विषय–वस्तुओं से उच्चाटित होकर वह पुनः वेद की ओर मुड़ जाता है। वेद के किसी भी खंड को हाथ में लेते ही उसे इतनी खुशी होती है मानों ईश्वर का सानिध्य मिल गया। श्रद्धा, हर्ष और जिज्ञासा के साथ वह वेद को जहाँ से भी पढ़ना शुरु करता है तो पड़ते ही रह जाता है। थोड़ी देर बाद उसका चंचल और जिज्ञासु मन–मस्तिष्क कहीं दूसरे वेद या उसी वेद के दूसरे पृष्ठ पर चलने का आग्रह करता है, तब वहाँ भी उसकी नजरें महान् अद्भुत इस व्यवहारिक–विज्ञान के एक–एक शब्दों से चिपकती हुई इतनी धीमी गति से आगे बढ़ती हैं जैसे चांदनी रात में चांदी–से चमकते बादलों को चीरते हुए चंदामामा आगे बढ़ते हुए दिखते हैं।

मैं तब वैसे पाठक की तल्लीनता पर टोक देता हूँ–भाई साहब, वेद यह इतना ही अच्छा लग रहा है तो मेरे तरफ से सबसिडी या उपहार समझ कर आधे दाम में खरीद कर घर ले जाकर पढ़िये तथा आस–पड़ोस के संबंधियों को भी वेद पढ़ा कर, सुनाकर, दिखला कर प्रचार कीजिए।

पास में पैसा और इच्छा रहते हुए भी वे वेद अपने घर ले जाने में असमंजस युक्त असमर्थता जता देते हैं। काफी कुरेदने पर कहते हैं–''पंडित जी, मेरे घर में इतना जगह नहीं है कि दस–दस खंडों के विशाल वेद मंडली को स्थान दे सकूँ। सिर्फ यजुर्वेद ही ले जाना चाहूँ तो यह भी चार खंडों में है। कुरान या बाइबल की तरह यह भी एक जिल्द में होता तो पढ़ने में भी और घर में रखने में भी तथा यात्रा में भी सर्वत्रोपयोगी होता।''

मैं भी मानता हूँ कि गैर आर्य समाजी प्रकाशनों से छपने वाले लगभग सारे वेद अशुद्ध और अप्रमाण्य यानि भ्रामक होते हैं। किन्तु आर्य–संस्थानों से भी जो–जो वेद छप रहे हैं वे सब गुरुकुल के छात्रों या वेदमंथन कारी विद्वानों के लिए ही उपयुक्त हैं। जन साधारण में ''जिसके घर में वेद नहीं, वो हिंदू का घर नहीं!'' जैसे नारे को लागू करना चाहें तो हमे चारों वेदों को फिलहाल एक जिल्द में न कर सकें तो चार जिल्द में तो करने ही होंगे।

हमारे वेदों में कुल बीस हजार चार सौ सोलह मंत्र हैं। इनको सरल अर्थ सहित छापा जाये तो 1800 पृष्ठों के पुस्तकाकार एक जिल्द में चारों वेद तैयार हो जायेंगे। ये विचार मैं कई आर्य–विद्वानों को उक्त बाइबल को दिखलाते हुए भी बताया हूँ। अब सार्वदेशिक, परोपकारी, दयानंद संस्थान और आर्य प्रतिनिधि सभा आदि से भी निवेदन करता हूँ कि ऐसा ही कंफटेबल (सुविधा जनक) वेद छापना आज के विधर्मियों की प्रतिस्पर्धा में हमारा प्रयास सफल होगा।

जैसे गुरुमुखी लिपि में बंधा हमारा ही एक धर्मग्रंथ संकुचित हो गया है, जैसे संयुक्त शब्दों की श्रृंखला में संस्कृत पंगु होती जा रही है, उसी तरह स्वरों तथा लंबे–लंबे शब्दों के कारण वेद–पठन जन–जन से काफी दूर होत जा रहा है। हमें वेदों के 'गुरुकुल संस्करण' और (जन साधारण) सामान्य–संस्करण के चमत्कारिक अंतर को समझना होगा। आज लगभग सभी वेद गुरुकुल संस्करण में ही छापे जा रहे हैं, इन्हें जन–सामान्य संस्करण में छापे जायें तो लागत मूल्य भी मात्र दो–तीन सौ रु. ही पड़ेगा। जिसे कोई भी व्यक्ति कहीं से भी खरीद कर पढ़, पढ़ा तथा बाँट भी सकता है।

हिंदुओं की वर्तमान दुरावस्था तथा मोदी जी के अनुकूल राज में आर्य समाज के पुनरोत्थान का यही अवसर है कि एक जिल्द में सार्थ वेदों को जन–जन में प्रचार किया जाय तथा गीता के जगह पर विशुद्ध मनुस्मृति का प्रचार किया जाय। क्योंकि मरणासन्न हिंदुओं के लिये संजीवनी विद्या किसी के पास है तो वह आर्य समाज ही है।

–आर्य प्रहलाद गिरि
मुख्य पुजारी–निंगेश्वर मंदिर,
निंगा, आसनसोल–713370 (प. बं.)
मो. 09735132360

****

ईशावास्यमिदं सर्वम्

अपनी लगनेवाली हर वस्तु तुम्हारी,
औ' पास रहनेवाली भी वस्तु तुम्हारी!

सुखभोग सामग्री जिसको उर से लगाए,
वह प्राण बनने वाली हर वस्तु तुम्हारी!

गर्व, अहं भाव से अधिकार जमाए,
वह मन में बसने वाली हर वस्तु तुम्हारी!

त्यागमय उपभोग हेतु सब दिया हमें,
रग–रग में रमनेवाली हर वस्तु तुम्हारी।

स्वत्व–पट से ढककर रखा उसे सुरक्षित,
चितवन में गड़नेवाली हर वस्तु तुम्हारी!

धन–धाम, सौख्य–सुविधा आनंदप्रदात्री,
जीवन को रँगनेवाली हर वस्तु तुम्हारी!

मन झूम–झूम उठता भौतिक पदार्थों पर,
सुख–बिन्दु झरनेवाली हर वस्तु तुम्हारी!

वन–बाग, रम्य उपवन, पशु–पक्षीगण मनोहर,
धरती पर सजनेवाली हर वस्तु तुम्हारी!

सर, शैल, सिंधु, सरिता, नभपिंड जो सभी,
हर वस्तु दिखने वाली हर वस्तु तुम्हारी!

किसको कहूँ मैं अपनी, सब पर तेरी मुहर है,
यह काया चलनेवाली भी नाथ जब तुम्हारी!

ओम् प्रकाश आर्य
आर्य समाज रावत भाटा

आवश्यकता है

श्रद्धानन्द अनाथालय ट्रस्ट (रजि.) कर्णताल करनाल में एक विवाहित वैदिक विद्वान् पुरोहित (आर्य समाज के विचारों वाला) की आवश्यकता है। आवास व भोजन निःशुल्क, वेतन योग्यतानुसार दिया जाएगा। योग्यता (शास्त्री) गुरुकुल स्नातक हो शीघ्र सम्पर्क करें।

श्रद्धानन्द अनाथालय ट्रस्ट (रजि.)
कर्णताल करनाल
मो. 9416566429

thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 08 का शेष

समाज सुधारक स्वामी...

उपरांत पुनः हिन्दू बनाये जाने का मार्ग भी प्रशस्त किया। उन्होंने स्वयं भी यह कार्य प्रारंभ किया।

महर्षि दयानंद ने बाल विवाह का भी जमकर विरोध किया। उन्होंने लिखा – "जिस देश में ब्रह्मचर्य विद्या ग्रहण रहित बाल्यावस्था और अयोग्यों का विवाह होता है वह देश दुःख में डूब जाता है।" उनके मत में – "सोलहवें वर्ष से लेकर चौबीस वर्ष तक कन्या और पच्चीसवें वर्ष से लेकर अड़तालीसवें वर्ष तक पुरुष का विवाह का समय उत्तम है।" यह विचार उस दौर को देखते हुए अत्यंत ही प्रगतिशील और महत्वपूर्ण थे। यही नहीं स्वामीजी ने बाल विवाह का विरोध करते हुए अनमेल विवाह का भी डटकर विरोध किया। उनका मत था कि तुल्यता से ही विवाह करना योग्य है – "तुल्य गुण, कर्म, स्वभाव वाले स्त्री पुरुषों के बिना गृहस्थाश्रम को धारण करके कोई किंचित भी सुख व उत्तम संतान को प्राप्त करने में समर्थ नहीं होते।" उन्होंने विवाह के समय स्त्री के चुनाव को महत्व देने की बात कही। उन्होंने विवाह से पूर्व स्त्री–पुरुष को एक दूसरे को जानने का अवसर देने का भी पक्ष लिया ताकि आगे आने वाला समय सुखमय और आनंदपूर्ण हो।

महर्षि दयानन्द के समय बाल–विवाह आदि के कारण अनेक स्त्रियाँ विधवा हो जाती थीं। उनका जीवन कष्टों और दुखों से परिपूर्ण होता था। समाज में अत्यंत ही दयनीय अवस्था के साथ रहती थीं। वे चलती–फिरती लाश बनकर रह जाती थीं। उस दौर में दो प्रकार की विधवाएं होती थीं। पहला जिनके पति का निधन बाल्यावस्था में ही हो जाता था और दूसरा, जो पति के सहवास के बाद विधवाएं होती थीं। पहली प्रकार की विधवाओं के पुनर्विवाह के वे पक्षधर थे। उनके अनुसार – "जिस स्त्री या पुरुष का मात्र पाणिग्रहण संस्कार हुआ हो और संयोग न हुआ हो अर्थात् अक्षत योनि स्त्री अक्षत वीर्य पुरुष हो तो उनका अन्य स्त्री या पुरुष के साथ पुनर्विवाह होना चाहिए।" उस दौर में तब जबकि बाल–विधवाओं का पुनर्विवाह एक क्रांतिकारी कदम समझा जाता था, महर्षि के विचार और इस दिशा में उनके प्रयास महान सामाजिक सुधार के प्रयास कहे जा सकते हैं। हालांकि दूसरी प्रकार की विधवाओं के पुनर्विवाह का उन्होंने निषेध माना। वे चाहते थे कि 'क्षत योनि' स्त्रियाँ या ऐसे पुरुष पुनर्विवाह न करके समाज और धर्म की सेवा करें। शुद्र पुरुष और स्त्री को उन्होंने विवाह की आज्ञा दी थी। स्वामीजी ने इस मामले में स्त्री और पुरुष दोनों की समानता के साथ अधिकार देने की बात कही है। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि पुनर्विवाह की आज्ञा सबको मिलनी चाहिए पुरुष को भी और स्त्री को भी। उन्होंने कहा– "विधवा विवाह से जो लोग विरोध करते हैं उनकी पुष्टि कर विधवा विवाह का खंडन करने की मेरी इच्छा नहीं है पर यह अवश्य कहूँगा कि ईश्वर के समीप स्त्री पुरुष दोनों समान हैं क्योंकि वह न्यायकारी है, उसमें पक्षपात का लेशमात्र नहीं है। जब पुरुषों को पुनर्विवाह करने की आज्ञा दे दी जावे तो स्त्रियों को दूसरे विवाह से क्यों रोका जाए?"

महर्षि दयानंद कुल क्षयादि आपद्धर्म के रूप में नियोग का समर्थन करते हैं। भ्रूण हत्या इत्यादि से छुटकारा, व्यभिचार की न्यूनता तथा उत्तम संतान की वृद्धि के लिए इस वैदिक प्रथा का दयानंद ने समर्थन किया है। इसके लिए उन्होंने महाभारत काल के उदाहरणों का भी सहारा लिया है। धृतराष्ट्र और पांडु व्यास जी के अंश हैं। पांडु के अयोग्य होने पर युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल, सहदेव, भीम, नियोग द्वारा ही कुंती ने प्राप्त किए हैं। स्वामी जी ने इसके सामाजिक पहलू को भी सामने रखा है। वे कहते हैं– "इस प्रकार नियोग और पुनर्विवाह दोनों के बंद होने से आजकल के आर्य लोगों में जो–जो भ्रष्टाचार फैला हुआ है, वह आप लोग देख ही रहे हैं। हजारों गर्भ गिराए जाते हैं, भ्रूण हत्याएं होती हैं। एक गर्भ गिराने से एक ब्राह्मण हत्या का पाप होता है। इन सब पापों का बोझ हमारे सर पर हैं।" अर्थात् वह हमारे सामने पुनर्विवाह या नियोग का मार्ग रख देते हैं। पुनर्विवाह में पूर्व पति के कुल का अंत हो जाता है और नियोग में पूर्व पति का कुल भी चलता है और दूसरे पुरुष का भी। कुल नाश से बचने का यही उपाय वैदिक परंपरा के अनुकूल है। यह व्यभिचार नहीं है। एक पवित्र, विशाल, विवेकपूर्ण, वैदिक, धार्मिक, सामाजिक, मर्यादित परंपरा है।

महर्षि दयानंद ने स्त्री शिक्षा पर भी बल दिया। स्त्री शिक्षा पाठशालाओं का प्रारंभ दयानंद जी ने ही किया। उन्होंने माना कि– "जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और व्यवहार की विद्या, न्यून से न्यून पढ़नी चाहिए वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म और व्यवहार की विद्या तो अवश्य सीखनी चाहिए।" स्वामीजी स्त्री को ऊँचे से ऊँचे स्थान पर पुरुष के समक्ष ही देखना चाहते थे। गुरुकुलों का प्रसार, स्कूल और कॉलेजों की स्थापना आज स्त्रियों के लिए की जा चुकी है। उन्होंने स्त्रियों के जीवन में सुधार हेतु एक और कदम उठाया। उन्होंने स्पष्टतः कहा कि पत्नी के होते हए पुरुष को दूसरा विवाह करने की अनुमति वेदों में नहीं है। वे कहते हैं कि स्त्री और पुरुष का एक बार ही विवाह वैदिक रीति के अनुकूल है। बहुविवाह की अनुमति न स्त्री को है न पुरुष को।

महर्षि दयानंद ने भारतीय समाज में व्याप्त एक और भ्रान्ति का विरोध किया। उनके समय विदेश यात्रा को अधर्म समझा जाता था, इसके कारण भारत दुनिया के दूसरे देशों से पूरी तरह कट गया। उन्होंने विदेश यात्रा को पाप माने जाने की भ्रान्ति के विरोध में कहा कि – "सो प्रथम आर्य–वर्त देशीय लोग व्यापार, राज कार्य भ्रमण के लिए सब शूरवीर होने लगते और अच्छे व्यवहार का ग्रहण, बुरी बातों को छोड़ने में तत्पर होकर बड़े ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं।" उन्होंने इस सम्बन्ध में स्पष्ट कहा है कि विदेश यात्रा न तो अधर्म है और न ही धर्म का नष्ट करना है, इसका ही परिणाम है कि आज आर्य समाज का प्रचार दूर–दूर देशों में भी हो चुका है और हो रहा है। स्वामी जी ने तो विदेश में अपना राज्य स्थापित करने का सन्देश भी दिया, जो बहुत महत्व रखता है।

महर्षि दयानंद ने मांस आदि खाने का तो विरोध किया ही उन्होंने पशुवध की भी घोर निंदा की है। उन्होंने अनेक उदाहरण ों के साथ यह स्पष्ट करने की कोशिश की कि वैदिक काल में भी मांस भक्षण की प्रथा नहीं थी। केवल मानव जाति का अहित करने वाले हिंसक पशुओं को मारने की आज्ञा थी और उनका मांस कुत्ते आदि पशुओं को खिलाने के लिए कहा गया था। गाय, बैल, भैंस, हाथी, घोड़े, ऊंट, भेड़, बकरी, गधे आदि हितकर और उपयोगी जीवों की हत्या का निषेध किया गया था। उन्होंने खाते समय किसी आडम्बर जैसे– चौका लगाना आदि को भी स्वीकार नहीं किया है, उसके अनुसार यह अविद्या है, अज्ञान है। उन्होंने तो किसी का जूठा खाना भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक माना है। पति पत्नी को भी एक दूसरे का जूठा खाने से उन्होंने मना किया है। परन्तु उनके मत में एक साथ खाने से प्रेम बढ़ता है और इसमें कोई दोष नहीं है। उनके मुताबिक शूद्र के हाथ का बना खाना खाने को भी उत्तम बताया है। हालाँकि यह जरूर कहा कि खाना जो भी बनाए वह साफ़ और पवित्र हो। ऐसा कहकर उन्होंने अस्पृश्यता का जमकर विरोध किया। कहा जा सकता है कि खाद्य–अखाद्य संबंधी उनके विचार नैतिकता के साथ–साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण से युक्त हैं। महर्षि दयानंद ने केश, दाढ़ी, मूंछ आदि का सम्बन्ध देश और जलवायु के साथ माना है, धर्म के साथ नहीं। उनके अनुसार अति उष्ण देश में हिंदुओं को भी सिर शिखा का छेदन करा देना चाहिए। उन्होंने वस्त्रों के सम्बन्ध में भी ऐसी ही बातें कहीं। उन्होंने जलवायु के मुताबिक वस्त्र की भी वकालत की।

दयानंद ने जीवन भर समतावाद की स्थापना पर बल दिया। आधुनिक युग में शूद्रों को वेदाधिकार सबसे पहले महर्षि दयानन्द ने ही दिया। उन्होंने कहा – "जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, चन्द्र, सूर्य और अन्नादि पदार्थ सबके लिए बनाए हैं जैसे ही वेद भी सभी मनुष्यों के लिए प्रकाशित किए हैं। शूद्रों को वेदाधिकार देने के तर्क में वे कहते हैं जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्र आदि के पढ़ने सुनने का न होता तो इनके शरीर में वाक् और श्रोत इन्द्रिय क्यों रचता?" उन्होंने सभी मनुष्यों को समान माना है। उनका मत है समस्त जातियां पहले एक थीं, सब समान थे, सबके जीने का, शिक्षा ग्रहण करने का, जीवन–उन्नति करने का समान अधिकार था जो मध्य युग में छीना गया है। महर्षि ने यह अधिकतर वापिस लौटाया है। वह स्त्री–पुरुष में भी समता की स्थापना करते हैं। वे धनवान और निर्धन में भी अंतर कम करने के लिए प्रयत्नशील थे। अतः महर्षि प्रत्येक क्षेत्र में गुण, कर्म और स्वभाव के आधार पर समता स्थापन के पक्ष में थे।

महर्षि दयानंद ने शिक्षा के महत्व को भलीभांति समझा और जीवन भर इसके लिए कार्य करते रहे। उनके अनुसार – "संतानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभाव रूप आभूषणों को धारण कराना माता–पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है।" उन्होंने शिक्षा विहीन मनुष्य को पशुतुल्य माना है। महर्षि दयानंद जी गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को महत्व देते थे। यही कारण है कि आर्य समाज ने उच्च शिक्षा आन्दोलन आरम्भ किया और अनेक उच्च शिक्षण संस्थानों की स्थापना की। वे दो प्रकार की थीं – कॉलेज–स्कूल, गुरुकुल। कॉलेज–स्कूलों में पाश्चात्य शिक्षा पद्धति के साथ वैदिक सिद्धांतों का प्रचार भी किया जाता है और गुरुकुल शुद्ध प्राचीन भारतीय पद्धति को अपनाकर चलता है जिसमें ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदाध्ययन आदि पर बल दिया जाता था। इनके अनुसार वेद के बिना धर्म का पूर्ण–ज्ञान संभव नहीं है। ये ब्रह्मचारी अविद्या का नाश, विद्या का प्रकाश और वैदिक धर्म के प्रचार का कार्य करते हैं।

वस्तुतः समाज सुधारक का जो कार्य कबीर और महानतम कवि तुलसीदास भी नहीं कर सके, वह कार्य स्वामी दयानन्द सरस्वती ने कर दिखाया। स्वामीजी भारतीय धर्म और संस्कृति के नवीनतम बौद्धिक संस्करण थे। वे आधुनिक भारत के सबसे बड़े एवं महान समाज सुधारक थे।

एसोसिएट प्रोफेसर
हिंदी विभाग, हंसराज कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
मो. 09891172389

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2015-17
गिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 18-19/3/2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

टंकारा में ऋषिबोधोत्सव सहर्षोल्लास सम्पन्न सहित

स्वामी दयानन्द सरस्वती की जन्म भूमि टंकारा ऋषि बोधोत्सव उत्साहपूर्वक सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर ऋग्वेद पारायण यज्ञ उपदेशक विद्यालय के आचार्य रामदेव जी के ब्रह्मत्व में प्रारम्भ हुआ। विद्यालय के ब्रह्मचारियों द्वारा कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए जिसमें भजन, कव्वाली, लघु नाटिका, भाषण इत्यादि थे।

16 फरवरी को उद्घाटन समारोह में श्रीमती एवं श्री एस.के.शर्मा मुख्य यजमान थे। इस अवसर पर कृषि राज्य मंत्री श्री मोहन भाई कुण्डारिया पधारे और यज्ञ में आहुति डाली और यज्ञ में उपस्थित आर्य जनों को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा कि टंकारा ट्रस्ट के प्रति मेरी अपार श्रद्धा है। अपराह्न 2 बजे युवा उत्सव एवं पारितोषिक वितरण समारोह में सौराष्ट्र के स्कूलों एवं कॉलेजों के विद्यार्थियों के लिए टंकारा ट्रस्ट की ओर से बॉलीबॉल प्रतियोगिता, प्रश्नमंच, व्यायाम प्रदर्शन, उपदेशक विद्यालय के ब्रह्मचारियों द्वारा संदेशात्मक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए। इसी अवसर पर डॉ. मुमुक्षु जी द्वारा वेद पाठ की प्रतियोगिता भी रखी गई। वैदिक परिवार निर्माण सम्मेलन एवं भक्ति संगीत सम्मेलन में श्री कुलदीप शास्त्री एवं श्रीमती सुनीता आर्या के भजन हुए। इस अवसर पर डॉ. एस.के.शर्मा एवं डॉ. विनय विद्यालंकार के प्रभावशाली प्रवचन हुए।

17 फरवरी 2015 को पूर्णाहुति पर श्री योगेश मुंजाल, श्री सुधीर मुंजाल, श्रीमती अंजु मुंजाल आदि यजमान उपस्थित थे। पूर्णाहुति के उपरान्त श्री एस.के.शर्मा द्वारा ध्वजारोहण हुआ। इस अवसर पर श्री सत्यपाल पथिक जी ने ध्वज गीतगाया। तदुपरान्त एक विशेष मंच से ओ३म् ध्वज लहराकर शोभायात्रा का प्रारम्भ किया गया। अपराह्न 3 बजे से विशेष श्रद्धांजलि सभा का आयोजन श्री सुरेश चन्द्र अग्रवाल की अध्यक्षता में हुआ। मुख्य अतिथि के रूप में गुजरात के राज्यपाल महामहिम श्री ओम प्रकाश कोहली जी सपत्नीक उपस्थित थे। इस अवसर पर डॉ. विनय विद्यालंकार, श्री एस.के. शर्मा, डॉ. बल्लभभाई कथीरिया ने अपने विचार रखे। इस वर्ष आर्य समाज जामनगर के श्री अविनाश भट्ट जी को टंकारारत्न की उपाधि से अलंकृत किया गया। इसी अवसर पर स्वामी संकल्पानन्द स्मृति सम्मान स्वामी शान्तानन्द (भुज) को दिया गया। महामहिम राज्यपाल को श्री वाचोनिधी आर्य ने विशेष कच्छ की पगड़ी एवं शॉल ओढ़ाकर सम्मानित किया। महामहिम राज्यपाल ने टंकारा ट्रस्ट की मासिक पत्रिका टंकारा समाचार के ''ऋषि बोधांक'' का लोकार्पण किया।

इसअवसर पर श्री एस.के.शर्मा ने डी.ए.वी. प्रधान श्री पूनम सूरी जी द्वारा भेजा गया संदेश सुनाया जिसमें वेदों और सत्यार्थ प्रकाश को जन –जन पहुँचाने की ओर संगठित रूप से कार्य करने की प्रेरणा दी गई। डॉ. विनय विद्यालंकार ने कहा गुरुकुलों को एक बड़ी संस्था के अधीन लाने की आवश्यकता है और आज के परिपेक्ष्य

में आधुनिक विज्ञान के माध्यम से शिक्षा के साथ गुरुकुलीय पद्धति से पढ़े हुए सुसंस्कारित ब्रह्मचारियों की आवश्यकता है। महामहिम राज्यपाल श्री ओम प्रकाश कोहली जी नेअपने वक्तव्य में कहा कि आज भारत की नारी हर क्षेत्र में प्रगति कर रही है इसका श्रेय स्वामी दयानन्द जी को जाता है। स्वामी जी द्वारा सती प्रथा, बाल विवाह, रूढ़िवादिता, पाखण्ड जैसी कुप्रथाओं को समाप्त करने में योगदान दिया। अतः आर्य समाज विशेषकर इस जन्मभूमि का दायित्व बढ़ जाता है कि उनके अधूरे सपने को पूर्ण किया जाये।

रात्रि सत्र में श्रद्धांजलि सभा में श्री डॉ. विनय विद्यालंकार, श्री कुलदीप शास्त्री एवं श्रीमती सुनीता द्वारा स्वामी जी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। इसी अवसर पर ट्रस्ट द्वारा स्वामी आर्येशानन्द सरस्वती के सौजन्य से पधारे हुए संन्यासीवृन्द को शॉल एवं मानदेय देकर सम्मानित किया।

भरुच में स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक द्वारा धर्म-प्रचार

आर्य समाज भरुच (गुजरात) के आमंत्रण पर आर्य जगत् के प्रसिद्ध दार्शनिक प्रवक्ता श्री स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक रोजड़ भरुच पधारे। आपने यहां के जयेन्द्रपुरी कॉलेज तथा वालिया के एक अन्य कॉलेज में छात्रों के समक्ष प्रेरणादायी प्रवचन किए।

दो परिवारों में सत्संग का आयोजन भी किया गया था, जिसमें ईश्वर, कर्मफल आदि गंभीर विषयों पर आपने वैदिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हुए जिज्ञासुओं की शंकाओं का समाधान किया। मुख्य कार्यक्रम में आर्य समाज

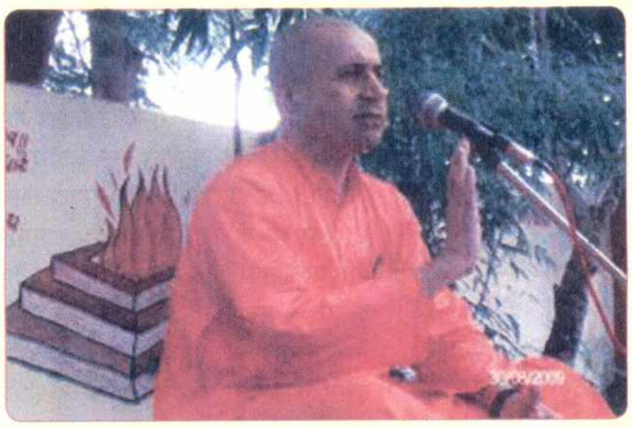

भरुच के मंत्री श्री नाथुभाई जी डोडिया का उनके विवाह के पचास वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में उनके परिवार जनों, मित्रों तथा आर्य समाज की ओर से अभिनन्दन किया गया। इस कार्यक्रम में श्री स्वामी विवेकानन्द जी ने सफल गृहस्थ जीवन विषय पर अपना मननीय प्रवचन दिया, जिसे श्रोताओं ने शांति पूर्वक सुना। आपने व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर व्यक्ति को सफल रहने के लिए चार आश्रम तथा चार वर्णो की वैदिक प्रणाली की विस्तार से व्याख्या की और ईश्वर का ध्यान, अग्निहोत्र, स्वाध्याय, माता–पिता आदि की सेवा, पशु–पंखी आदि का पालन–रक्षण तथा अतिथियों के सांनिध्य से ज्ञान–वर्धन आदि को सुखी जीवन के लिए अनिवार्य बताया।

आपने मनुष्य जीवन का वास्तविक लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति को बताया और सर्व दुःखों से छूटना, ईश्वर का उत्तम आनंद प्राप्त करना तथा समस्त सृष्टि में निर्बाध विचरण करना केवल मोक्ष से ही संभव है, यह बताया।

आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज सिरोही राजस्थान की छात्राओं ने जमाया सिक्का

आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज सिरोही राजस्थान की दो ब्रह्मचारिणियों ने गुजरात स्थित टंकारा में ऋषि बोधोत्सव पर आयोजित डॉ मुमुक्षु आर्य गुरु विरजानन्द सरस्वती पुरस्कार प्रतियोगिता में दिनांक 15/2/2015 को सम्पूर्ण योगदर्शन एवं यजुर्वेद के 40वें अध्याय के अर्थ सहित कंठस्थीकरण प्रतियोगिता में 3 प्रतिाागियों ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। इस गुरुकुल की कक्षा –8 की ब्रह्मचारिणी प्रज्ञा व कक्षा –11 की ब्रह्मचारिणी कृष्णा ने प्रथम स्थान प्राप्त कर डॉ मुमुक्षु आर्य गुरु विरजानन्द सरस्वती पुरस्कार एवं 5–5 हजार रूपये प्राप्त कर आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज का गौरव बढ़ाया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए एस.के शर्मा द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – पूनम सूरी